धृति क्षमा दमोस्तेयं शौचं इन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

Regd. No. 58414/94

स्वामी रामानन्द जी द्वारा संचालित

हमारी साधना

त्रैमासिक

वर्ष 32 • अंक 3 • जुलाई–सितम्बर 2025

मूल्य रु. 25/–

श्रीगुर पद नख मनि गन जोती। सुमिरत दिब्य दृष्टि हियँ होती॥

करुणामयी सुमित्रा माँ

हमारी साधना

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्।।
न त्वहं कामये राज्यम्, न स्वर्गं नापुनर्भवम्।
कामये दुःखतप्तानां, प्राणिनामार्ति नाशनम्।।

वर्षः 32 जुलाई–सितम्बर 2025 अंकः 3

भजन

उर धरु रामचरन सुखदाई।
सुमिरत समन होहिं सब संकट पाप पुंज जरि जाई।
मानस रोग जाहिं जनमन के जे निसिदिन दुखदाई।।
स्वधरम में रुचि बढ़हि निरन्तर हिय सुख सांति समाई।
निहचौं विनसि कुअंक भाल के भव बन्धन कटि जाई।।
वेद पुरान संत सुर ऋषि मुनि सबहि रहे समुझाई।
प्रभु पद पदम प्रीति बिनु कबहूँ कोउ न सदगति पाई।।
रामसरन अस समुझि रहत तन परसु चरन चित लाई।
नाहिं त समय चुके पछितैहसु तब कछु हाथ न आई।।

भजन संख्या 14 — स्व. श्री सूर्यप्रसाद शुक्ल जी 'रामसरन'

प्रकाशक
साधना परिवार
स्वामी रामानन्द साधना धाम,
संन्यास रोड, कनखल,
हरिद्वार–249408
फोनः 01334–311821
मोबाइलः 08273494285

सम्पादिका
श्रीमती रमना सेखड़ी
995, शिवाजी स्ट्रीट,
आर्य समाज रोड
करोल बाग,
नई दिल्ली–110005
मोबाइलः 09711499298

उप–सम्पादक
श्री रमेश चन्द्र गुप्त 'विनीत'
1018, महागुन मैंशन–1,
इन्दिरापुरम,
गाजियाबाद–201014
ई–मेलः rcgupta1018@gmail.com
मोबाइलः 09818385001

विषय सूची

क्र.सं.	विषय	रचयिता	पृ.सं.
1.	चित्र – करुणामयी सुमित्रा माँ		2
2.	भजन	स्व. श्री सूर्यप्रसाद शुक्ल जी 'रामसरन'	3
3.	सम्पादकीय		5–6
4.	भजन		7
5.	गीता विमर्श – धारावाहिक	स्वामी रामानन्द जी	8–11
6.	गुरु वाणी – धारावाहिक		12
7.	Letters to Seekers – धारावाहिक		13–14
8.	यह संसार भी एक सपना है		14
9.	भागवत के मोती – धारावाहिक		15
10.	साधना परिवार की विभूतियाँ – श्री बन्धु जी – धारावाहिक		16–18
11.	पूज्य गुरुदेव महाराज के साथ साधकों के संस्मरण	हरि प्रकाश सिंह चौहान	19–21
12.	जरूरतमन्द की मदद		21
13.	बाल साधना शिविर का विवरण		22
14.	दिगोली साधना शिविर का विवरण		22
15.	साधना धाम हरिद्वार में गुरु पूर्णिमा पर्व 2025 का विवरण तथा प्रवचन सार		23–27
16.	अमृत वचन	रमना सेखड़ी	28–29
17.	विचारों का महत्व	श्रीमती चन्द्रावती शर्मा	30–33
18.	शुचिता : बाहरी और आन्तरिक	प्रज्ञा	33–34
19.	बोझ प्रभु के कंधे पर	सन्त श्री विनोबा जी भावे	35
20.	सरल जीवन ही सच्चा ज्ञान है	श्री दिलीप जी देवनानी	36
21.	दानदाताओं की सूची		37–39
22.	गुरु की छाया में ही सफल हो सकती है शिष्य की यात्रा	संकलन – पी.बी. श्रीवास्तव	39
23.	श्री पुरन्दर तिवारी जी के प्रति श्रद्धांजलियाँ		40
24.	आगामी कार्यक्रमों की सूचना		41
25.	श्री स्वामी रामानन्द जी साधना साहित्य		42
26.	चित्र – गुरु पूर्णिमा शिविर 2025		43–44

Printed and Published by Shri Dinesh Bahl for and on behalf of Swami Ramanand Sadhna Pariwar, Sadhna Dham, Sanyasa Road, KANKHAL-Haridwar (Uttarakhand) and printed at Rakmo Press Pvt. Ltd., C-59, Okhla Industrial Area Phase-I, New Delhi-110020.

सम्पादकीय

सम्पादक मण्डल का सभी सुधी साधकों को प्रेम भरा अभिवादन!

आदिकवि शंकराचार्य जी ने लिखा है –

षडंगादिवेदो मुखे शास्त्रविद्या कवित्वादि गद्यं सुपद्यं करोति।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरङ्घ्रिपद्मे ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम्॥

अर्थात् सभी वेद एवं सभी शास्त्र जिन्हें कंठस्थ हों, अति सुन्दर कविता स्वरूप निर्माण की प्रतिभा हो, लेकिन गुरु के श्रीचरणों में लगन न हो तो इन सभी सद्गुणों का कोई महत्त्व नहीं होता है।

इस उक्ति को यदि गहराई से समझें तो इसका अर्थ यह भी निकलता है कि जिनकी श्री गुरु चरणों में लगन हो उनमें उपरोक्त सभी गुण स्वतः ही समाविष्ट हो जाते हैं। श्री गुरु चरणों में लगन का जीवित उदाहरण थे अहमदाबाद के दिवंगत श्री पुरन्दर तिवारी जी जिन्होंने गत 7 जुलाई को गुरु महाराज के परम धाम स्वामी रामानन्द तपस्थली दिगोली में तिनके के समान प्राणों को त्याग दिया। घर से दिगोली के लिये निकलने से पूर्व ही उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था। घरवालों ने जाने के लिये रोका भी था किन्तु उनकी निष्ठा की पराकाष्ठा उनको रुकने नहीं दे रही थी। प्राणों का भय त्याग कर उन्होंने कह दिया था कि गुरुधाम में यदि प्राणों का विसर्जन भी हो जाये तो क्या चिन्ता है। और यही हुआ भी। गुरु पूर्णिमा के पहले दिन जब वे भ्रमण के लिये निकले ही थे कि उनके प्राण गुरु के श्री चरणों में लीन हो गये। इतना ही नहीं, उनका दाह संस्कार भी उसी भूमि पर हुआ।

श्री गुरु चरणों में उनकी निष्ठा ने साधना परिवार के सभी साधकों के मन में अपना स्थान बना लिया था। गुरु वचनों के प्रचार-प्रसार के कार्य ने उनके नेतृत्व में 2020-21 के कोरोना काल में तीव्र गति पकड़ी जब उन्होंने WhatsApp पर स्वामी रामानन्द मंच नामक ग्रुप की स्थापना की। जिन दिनों लोगों का घर से

निकलना बन्द हो गया था तब उन्होंने ऐसी व्यवस्था कर दी थी – घर बैठे ही शिविर का आयोजन हो जाता था। उनके जीवन का प्रत्येक क्षण गुरु-स्मरण में व्यतीत होता था। इसी के परिणामस्वरूप उन्होंने ऐसी गति पाई जो योगियों के लिये भी दुर्लभ है। इस घटना ने गुरु-कृपा का प्रत्यक्ष दर्शन करा दिया। वर्तमान पीढ़ी श्री पुरन्दर जी के इस योगदान को भुला नहीं पायेगी। श्री गुरु महाराज की कृपा से उनके कार्यभार को बहन कुसुम माहेश्वरी जी ने बखूबी संभाल लिया है।

इस विशेष घटना के अतिरिक्त गत तिमाही में साधना धाम हरिद्वार में बाल शिविर तथा विभिन्न स्थानों पर गुरु-पूर्णिमा शिविरों का आयोजन किया गया। साधना धाम में गुरु पूर्णिमा शिविर के पश्चात दिनांक 11 जुलाई से 17 जुलाई तक श्रीमद्‌भागवत का आयोजन किया गया जिसमें व्यासपीठ पर हल्द्वानी के आचार्य सुशील जी विराजमान थे तथा यजमान थीं श्रीमती मिथिलेश तिवारी जी। कार्यकारिणी की बैठक उपरोक्त अप्रत्याशित घटना के चलते नहीं हो पाई। हाँ, साधना धाम हरिद्वार में 20 किलोवॉट क्षमता वाला सौर-ऊर्जा संयन्त्र स्थापित करने का निर्णय अवश्य लिया गया जिसके व्यय की पूर्ति के लिये सम्पन्न साधकों ने दिल खोल कर दान देना भी आरम्भ कर दिया है। इस संयन्त्र की स्थापना से धाम में प्रतिमाह होने वाले बिजली के खर्च में पर्याप्त बचत होगी।

प्रस्तुत पत्रिका में सुधी पाठकों के लिये धारावाहिक लेखों के अतिरिक्त शिविरों का विवरण तथा साधना परिवार की पुरानी पत्रिकाओं, कल्याण, राम सन्देश जैसी पत्रिकाओं से उद्धृत चयनित लेखों का समावेश भी किया गया है। आशा है पाठकगण इन लेखों से लाभान्वित होंगे। पत्रिका की समालोचना, स्वरचित लेख व भजन तथा सुधार के लिये सुझाव सदैव ही आमन्त्रित हैं।

राम राम, धन्यवाद!

सम्पादक मण्डल

भजन

सत्-चित-आनंद स्वरूप प्रभु
मेरा रोम-रोम हर्षाते हो।
1. प्रभु नयनों में नयन बसें मेरे
नयनों से स्नेह बरसाते हो।
सत्-चित-आनंद स्वरूप ......
2. प्रभु वचनामृत श्रवण कराते हो
मन बगिया को महकाते हो।
सत्-चित-आनंद स्वरूप ......
3. प्रभु मुख से गुणगान कराते हो
कृपा-कुसुम बरसाते हो।
सत्-चित-आनंद स्वरूप ......
4. प्रभु विषम भूमि अपरिचित मग में
पग धीरे-धीरे धराते हो।
सत्-चित-आनंद स्वरूप ......
5. हर पल हर क्षण तेरा ध्यान रहे
यह अर्ज प्रभु से करती हूँ।
सत्-चित-आनंद स्वरूप ......

– कुसुम माहेश्वरी

❖ ❖ ❖

राम नाम सुखदाई भजन करो भाई
ये जीवन दो दिन का।
1. ये तन है जंगल की लकड़ी
आग लगे जल जाई भजन करो भाई
ये जीवन दो दिन का।
2. ये तन है माटी का ढेला
बूँद लगे गल जाई भजन करो भाई
ये जीवन दो दिन का।
3. ये तन है कागज़ की पुड़िया
हवा लगे उड़ जाई भजन करो भाई
ये जीवन दो दिन का।
4. ये तन है फूलों का बगीचा
धूप लगे मुरझाई भजन करो भाई
ये जीवन दो दिन का।
5. ये तन है भूतों की हवेली
मार पड़े भग जाई भजन करो भाई
ये जीवन दो दिन का।
6. ये तन है सपने की माया
आँख खुले कछु नाहीं भजन करो भाई
ये जीवन दो दिन का।
राम नाम सुखदाई भजन करो भाई
ये जीवन दो दिन का।

❖ ❖ ❖

तूने खूब रचा भगवान् खिलौना माटी का।
माटी का रे.... माटी का.....
तूने खूब रचा भगवान् खिलौना माटी का।
1. कान दिए हरि भजन सुनन को,
तू मुख से कर गुणगान खिलौना माटी का।
तूने खूब रचा भगवान् खिलौना माटी का।
2. जिह्वा दी हरि भजन करण को,
दी आँखें कर पहचान खिलौना माटी का।
तूने खूब रचा भगवान् खिलौना माटी का।
3. शीश दिया गुरु चरण झुकन को,
और हाथ दिए कर दान खिलौना माटी का।
तूने खूब रचा भगवान् खिलौना माटी का।
4. राम नाम का बना के बेडा,
और उतरो भव से पार खिलौना माटी का।
तूने खूब रचा भगवान् खिलौना माटी का।

❖ ❖ ❖

कुछ न बिगड़ेगा तेरा प्रभु की शरण आने के बाद।
हर खुशी मिल जाएगी चरणों में झुक जाने के बाद।।
प्रेम की मंज़िल के राही कष्ट पाते हैं ज़रूर।
बीज फलता है सदा मिट्टी में मिल जाने के बाद।।
पूछ उन फूलों से जाकर आई है जिन पर बहार।
रात भर काँटों में सोया डाल पर आने के बाद।।
देखकर काली घटा को उड़ भँवर मत हो निराश।
बंद कलियाँ भी खिलेंगी रात ढल जाने के बाद।।
प्रेम कर निर्मल सदा तू उस मेरे घनश्याम से।
सूखी बगिया भी खिलेगी ऋतु बदल जाने के बाद।।
जब तलक है भेद मन में कुछ नहीं कर पाएगा।
रंग लाएगा ये साधन भेद मिट जाने के बाद।।
हर ख़ुशी मिल जाएगी चरणों में आने के बाद।

गीता विमर्श
अध्याय 6

(गतांक से आगे)

यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता।
योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः ॥19॥

'जैसे वायु रहित स्थान में रखा दीपक (दीप शिखा) डोलता नहीं है, वह उपमा दी जाती है योगी की, जिसका चित्त काबू में हो गया है आत्मा के योग को साधते हुए'।।19।।

युक्तावस्था को प्राप्त योगी के लिये उपमा देते हैं। दीपक वायु रहित स्थान में रखा जाये तो उसकी शिखा स्थिर रहती है। ऐसे ही योगी का चित्त कम्पन रहित होता है। शिखा भी धारावाही रूप से स्थिर है। पल-पल जलते हुए तेल से शिखा बन रही है, परन्तु वह बिल्कुल एक सी है। अतः, वही और स्थिर दीखती है। ऐसे ही योगी के चित्त का प्रवाह बिल्कुल एक रस, एक-निष्ठ हो जाता है। अतः वह अडोल होता है।

उपनिषद् में ठीक इसके अनुरूप कथन आता है –

यदा पञ्चावतिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसा सह।
बुद्धिश्च न विचेष्टति तामाहुः परमां गतिम्॥

कठोपनिषद् 2.3.10

'जब पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ, मन के साथ स्थिर हो जाती हैं, और बुद्धि भी चेष्टा नहीं करती, उसे परम गति कहते हैं।' यह भी युक्तावस्था का वर्णन है।

यत्रोपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवया।
यत्र चैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति ॥20॥
सुखमात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्।
वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः ॥21॥
यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते ॥22॥
तं विद्याद्दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम्।
स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा ॥23॥

'जिसमें योगसाधना के द्वारा रोका हुआ चित्त शान्त हो जाता है और जिसमें आत्मा से आत्मा को देखता हुआ आत्मा में सन्तुष्ट होता है, जो आत्यन्तिक सुख है, जिसे बुद्धि ग्रहण कर सकती है (परन्तु), जो इन्द्रियों से परे का है, उसे जिस (अवस्था) में (व्यक्ति) जानता है और जिसमें टिका हुआ तत्त्व से च्युत नहीं होता, जिसे पाकर उससे बड़ा दूसरा लाभ नहीं मानता और जिसमें स्थित हुआ व्यक्ति बड़े दुःख से भी चलायमान नहीं होता, उसे तुम योग नाम वाला समझो। वह दुःख के संयोग का वियोग करने वाला है। विषाद रहित चित्त होकर व्यक्ति को वह योग निश्चयपूर्वक करना चाहिए'।।20-23।।

इस आत्म-संयम-योग की सिद्धि से क्या होता है इसका सुन्दर वर्णन हमें इन चार श्लोकों में मिलता है।

इस योग की सिद्धि में निर्विकल्प समाधि होती है जिसमें द्रष्टा अपने स्वरूप में स्थिर हो जाता है। वह कृतकृत्य हो जाता है। उसका भटकना बीत जाता है सदैव के लिए। हम क्रमशः इन श्लोकों पर विचार करेंगे।

23वें श्लोक के पूर्वार्ध के साथ वाक्य पूरा होता है, 20वें से आरम्भ होकर। 23वें श्लोक का अपरार्ध अपने में एक वाक्य है।

वाक्य की पूर्ति होती है 'उसे योग नाम वाला जानो, जो दुःख के संयोग का वियोग करने वाला

है'। बाकी तीन श्लोक उस योग-स्थिति का वर्णन करते हैं।

जहाँ-जिस अवस्था में। साधना की परिपक्व अवस्था में जब सिद्धि होती है, जब साधना समाप्त हो जाती है, वही युक्त अवस्था में होता है। योग-सेवा के द्वारा रोका हुआ चित्त उपरामता को पा जाता है। योग-सेवा तो साधना है जिसका ऊपर के श्लोकों में वर्णन है। वह साधना चित्त को रोकने का प्रयास है। उस प्रयास के करते-करते चित्त हार जाता है, अपने चंचलता के स्वभाव को खो देता है। जैसे चंचल घोड़ा थककर हार जाता है और सीधा हो जाता है, ऐसे ही चित्त हार जाता है। फिर वह विषयों की ओर नहीं भागता और न भीतर दौड़ता है। जैसे किसी वस्तु से मन हट जाने पर फिर मन वस्तु की समीपता में भी चंचल नहीं होता, ऐसे ही उपराम हो जाने पर चित्त चंचल नहीं होता। फिर उसे रोकने की आवश्यकता नहीं होती। वह स्वत: ही रुका रहता है।

20वें के अपरार्ध में कहा, जिस अवस्था में 'आत्मा से आत्मा को देखकर आत्मा में सन्तुष्ट हो जाता है'। यह आत्मस्थिति है जो मनोलय पर होती है। जब वृत्ति का नितान्त अभाव हो जाता है, जब अभाव की भी प्रतीति नहीं होती, तब होती है आत्मा में स्थिति। देखने वाला अपने में स्थित हो जाता है। वह चेतना जो मन-बुद्धि-इन्द्रियों के द्वारा दूसरे को देखती थी, वही दूसरा इनसे सिमट कर अपने को ही देखता है। वास्तव में उसे 'देखती है' ऐसे भी नहीं कहा जा सकता। वह प्रकृति से परे अपने में स्थिर होती है। यही योगदर्शन का केवलीभाव है। उस अवस्था में दूसरा नहीं होता, द्रष्टा ही द्रष्टा होता है और वह अपनी सत्ता को प्रतीत करता है। इस आत्म-दर्शन का परिणाम होता है परम सन्तोष। आत्मा तो अपने में पूरा पूरा है, उसी के सुख का अंश मन, बुद्धि, इन्द्रियों को प्राप्त होता है। वह साधक अपनी शक्ति और ज्ञान में भी पूरा हो जाता है। अपने पूर्णत्व की अनुभूति के अभाव के कारण ही तो वह व्याकुल हुआ सुख को प्रकृति में प्रकृति के द्वारा खोजता है। जब अपने को ही परमानन्द का स्रोत जानता है तब सन्तोष हो जाता है। उसकी प्रकृति पर निर्भरता समाप्त होती है। अपने अजर, अमर, अविनाशी भाव को पाकर उसे सन्तोष ही सन्तोष होता है। आनन्द की खोज समाप्त हो जाती है। कस्तूरी तो मृगनाभि में रहती है परन्तु मृग जानता नहीं, इसलिये भटकता फिरता है। जब वह जान ले तो भटकना समाप्त हो सकता है। ऐसी ही दशा मनुष्य की है। परमानन्द तो उसमें ही है, परन्तु वह इस बात को न जानकर उसे अन्यत्र खोजता है।

आगे 21वें श्लोक में उसी सुख का वर्णन किया है। व्यक्ति उस अवस्था में जानता है उस सुख को। वह सुख कैसा है? आत्यन्तिकम् – अत्यन्त – बहुत ही। जिसमें अतिशय की सीमा है। जो बड़े से बड़ा है, जिससे बढ़कर कोई सुख नहीं। आत्मा के सुख के बराबर तो कोई भी सुख नहीं। आत्मा अनन्त है। देश तथा काल की सीमाओं से रहित है। आत्मा का सुख भी अनन्त है। प्रकृति में तो वह अनन्त ही सीमित होकर प्रकट होता है। जब इस साधना के द्वारा व्यक्ति मन को लांघकर आत्मा में स्थिर होता है तो उस अनन्त आत्मा के अनन्त सुख की अनुभूति करता है। भौतिक सुख और देवलोक के सुख, बड़े देवाधिदेवों के सुख उस आत्म-सुख के सामने कुछ नहीं हैं।

वह सुख बुद्धि के द्वारा ग्रहण किया जा सकता है। परन्तु वह इन्द्रियों से परे का है। वह सुख इन्द्रियों का विषय नहीं है। क्योंकि वह प्रकृति के

संयोग से पैदा हुआ नहीं है। सामान्य सुख तो इन्द्रियों के विषयों से संयोग होने पर होते हैं। परन्तु, यह सुख तो अपने में स्थिर होने से अनुभव होता है। यह तो आनन्दमय आत्मा की स्वयं आत्मप्रतीति है। इसकी प्रतीति तो चेतना के आत्मा में प्रतिष्ठित होने पर होती है।

यह बुद्धिग्राह्य कैसे है? आत्मा ने सुख को प्रतीत किया। समाधि भंग होने पर तो उसकी स्मृति भी न रहनी चाहिए। तब तो चेतना प्रकृति में आ जाती है। बुद्धि उस आनन्द को ग्रहण कर लेती है। उसी से तो उसकी स्मृति बनी रहती है। यदि वह प्रकृति के द्वारा बिल्कुल ग्राह्य ही न हो तो स्मृति भी न रहनी चाहिए। जो स्मृति रहती है वह इस बात का प्रमाण है कि बुद्धि उस सुख को ग्रहण कर लेती है।

आत्मस्थिति के अनुभव का प्रभाव तो मन, बुद्धि, इन्द्रियों पर भी पड़ता है। सीधा प्रभाव तो बुद्धि पर पड़ता है। वह जगमगा उठती है उस महान् अनुभव से। वह आत्मा के धर्मों से थोड़ा रंग जाती है। समूचा आपा बहुत एक तृप्ति का अनुभव करता है ऐसे अनुभव के परिणाम-स्वरूप।

और **'न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः'** और 'यह टिका हुआ तत्त्व से चलायमान नहीं होता'। यह? साधक जिसने योगसाधना के द्वारा सिद्धि लाभ की है। कहाँ टिका हुआ? आत्मा में टिका हुआ। क्या समाधि को लाभ करके फिर उठता ही नहीं? नहीं, उठता है परन्तु उठने पर भी आत्मानुभूति को इतनी दृढ़ता के साथ लेकर आता है कि चलायमान नहीं होता उस तथ्य से जिसको उसने अनुभव किया है। आत्मबोध ही तत्त्व है। वही परम सत्य है। उसे व्युत्थान होने पर भूल नहीं जाता है। आत्मा की इस प्रकार की अनुभूति आत्म-चेतना को सदैव के लिये जागृत कर देती है। फिर देहाध्यास नहीं होता। फिर व्यक्ति अपने को मन, बुद्धि अथवा तन समझता हुआ इनके ह्रास से दुखित नहीं होता। फिर कहता है –

'किमिच्छन् कस्य कामाय शरीरमनुसंज्वरेत्?'

बृहदारण्यक० 4.4.12

'क्या इच्छा रखता हुआ, किस कामना की तृप्ति के लिये व्यक्ति शरीर के साथ दु:खी हो?'

इसका स्पष्ट अर्थ है कि भीतर एक बार आत्मस्थिति होने पर व्यक्ति भूल नहीं सकता। उसका आत्मज्ञान लुप्त नहीं हो सकता। विकास की दृष्टि से देखते हुए कहना होगा कि संस्कारों के क्षय के निमित्त कई आंधियाँ आ सकती हैं। उनमें दृष्टि मैली हो जाएगी, परन्तु वह क्षण भर के लिये ही होगी। यदि संस्कार पूर्णरूपेण क्षीण हो गये हैं तो फिर व्युत्थान और समाधि की अवस्था में विशेष अन्तर ही न रहना चाहिए। परन्तु वह तो समय पाकर होता है।

22वें श्लोक में इस आत्मानुभूति का महत्त्व बताते हैं। यह ऐसा अनुभव है जिसे प्राप्त करके इससे बढ़कर और कुछ रहता ही नहीं। संसार में तो परम्परा है, एक से एक बढ़कर अनुभव हैं। जिसे व्यक्ति प्राप्त कर लेता है वह अनुभव उसकी नज़र से उतर जाता है। दूसरे अनुभव के लिये लालसा पैदा होती है और यह दौड़ चलती रहती है। यह प्रकृतिगत अनुभवों के विषय में सत्य है। वहाँ पर तो ऐसी अनुभूति की सम्भावना ही नहीं जो अनन्त आत्मा की अनन्त माँग को पूरा कर सके। अत: भटकन बनी रहती है। केवल आत्मानुभव ही ऐसा है कि जिसके होने से उससे बढ़कर संसार में कुछ रहता ही नहीं। वही परम लाभ दीखने लगता है। उस विषय में कुछ सन्देह नहीं रहता। अत:, अब साधक की दौड़ समाप्त हो जाती है। वह जानता है कि इससे बढ़कर आनन्दानुभूति असम्भव है। यहाँ

तो सन्त की अनन्त के साथ तुलना है, सीमित की निस्सीम के साथ। अतः भ्रम के लिये गुंजाइश ही नहीं रहती। इसीलिये तो भटकन समाप्त हो जाती है। कौड़ी ढूँढने वाले को हीरा मिल जाये तो उसे फिर कौड़ी-कौड़ी के लिये भटकने की क्या आवश्यकता? जिसे अनन्त सुख का अक्षय स्रोत मिल जाये उसे सुख की क्या अपेक्षा?

और अन्त में कहा – 'जिसमें स्थित हुआ व्यक्ति महान् से महान् दुःख के द्वारा भी चलायमान नहीं किया जा सकता'।

क्या समाधि में स्थिर हुआ व्यक्ति, आत्मानुभूति में स्थिर हुआ व्यक्ति दुःख से चलायमान नहीं होता? जितनी ही व्यक्ति में चञ्चलता होती है उतनी ही जल्दी वह परेशान हो जाता है। व्यक्ति की समता और ज्ञान की परीक्षा होती है दुःख में। यदि दोनों, समता और ज्ञान, मानसिक प्रयत्न का परिणाम हैं तो वह हिल जायेंगे। बस, धक्का पर्याप्त ज़ोर का होना चाहिए। आखिर सब कुछ जो प्रकृति का है उसकी सीमा है। आत्मस्थित व्यक्ति सम होता है। वह समत्व व्यक्ति की बुद्धि को भी सम कर देता है। वह आत्मज्ञान भी व्यक्ति को जीवन-मृत्यु से परे कर देता है। इस आत्मा की समता के कारण ही व्यक्ति भारी से भारी दुःख में भी व्याकुल नहीं होता। सिख गुरुओं ने, जो सन्त थे घोर शारीरिक यातनाएँ सही हैं और लौकिक-दृष्टि से मानसिक व्यथाएँ भी। परन्तु, सबने हँसते-हँसते फूलों की मार की तरह सब कुछ सहा है।

यह जो आत्मस्थिति है इसी को योग कहते हैं। यह जो समाधि है वह योग है। युक्तावस्था ही योग है। युजिर-समाधि, युज् धातु जिससे 'योग' शब्द बनता है समाधि के अर्थ में भी बरता जाता है।

उसका नाम 'योग' है। यह 'योग दुःख के संयोग का वियोग करने वाला है'। व्यक्ति को दुःख की प्रतीति से नितान्त परे ले जाता है। चाहता हुआ भी व्यक्ति दुःखी नहीं हो सकता है। ऐसा बँध जाता है व्यक्ति अपनी स्थिरता से। आँसू सूख जाते हैं। हृदय कोमल होता हुआ भी वज्र के समान कठोर हो जाता है। दुःख की नितान्त निवृत्ति का रास्ता है आत्मज्ञान को लाभ करना, आत्मा में प्रतिष्ठित हो जाना। आत्म-चेतना की जागृति होने पर फिर व्यक्ति अपने को प्रकृति से एक नहीं कर पाता। दुःख का कारण तो यही देहाध्यास है।

यह 'योग' करने योग्य है। इससे दुःख की नितान्त निवृत्ति होती है और आत्यन्तिक-सुख की प्राप्ति। अतः, यह करणीय ही है। यह योग कैसे सम्भव है? चित्त अनिर्विण्ण होना चाहिए। उद्वेग रहित हो, विषाद-रहित हो। आशा-निराशा से और उत्सुकता से रहित हो। धीर हो और सम हो। तब हो सकती है इस योग की सिद्धि।

और निश्चय हो पूरा-पूरा। बिना साधना में निष्ठा के योग सिद्धि असम्भव है। व्यक्ति का मन चञ्चल हो उठता है। रास्ते की कठिनाइयों से घबड़ा कर रास्ता छोड़ देता है। अपने अनिश्चय के कारण ही अपने किये-कराये को नष्ट करता जाता है नकारात्मक विचारों के द्वारा। निश्चय से दृढ़ता आती है और व्यक्ति पार पा जाता है।

आगामी श्लोक साधना की परिपाटी बताते हैं। साधना में कैसे अग्रसर हो, उसकी रीति का वर्णन करते हैं।

(क्रमशः)

❖ ❖ ❖

गुरु वाणी

'श्री राम' नाम के प्रसाद से व्यक्ति जगने लगता है, मानो सोता हुआ सिंह जग जाये। इसी से भगवान् का कृपा-प्रसाद प्राप्त होता है। नाम खूब स्मरण कीजियेगा। नाम के स्मरण से, नाम का अनन्य अवलम्बन लेने से भागवती कृपा का - महाशक्ति का प्रवाह व्यक्ति में प्रेरित होने लगता है और शीघ्र ही वह कृतकृत्य हो जाता है। (पत्र 87)

❖ ❖ ❖

आदर्श तथा 'वर्तमान' परिस्थिति में बहुत काल तक एक अन्तर बना रहना स्वाभाविक है। पूर्णत्व की अवस्था में ही दोनों एक हो सकते हैं। जैसे ही हमारा कदम आगे बढ़ता है वैसे ही हमारा आदर्श भी ऊँचा हो जाता है, हो जाना चाहिये। हिमालय की एक चोटी पर चढ़ने पर जो नीचे से सर्वोच्च दिखाई पड़ती थी, दूसरी उससे और ऊँची चोटी दिखाई पड़ने लगती है।

इसी प्रकार की दशा मनुष्य जीवन में होनी नितान्त स्वाभाविक है। अतः आदर्शों पर ध्रुवता की छाप लगाने का काम न करना चाहिये। अपितु वर्तमान का सदैव अतिक्रमण करने को उद्यत रहना आवश्यक है। यही जीवन में प्रगतिशीलता है। हृदय में, मस्तिष्क में, आत्मा में तथा तन में, समाज तथा देश - **सभी क्षेत्रों में व्यक्ति को आगे बढ़ना सीखना है।** स्थिरता केवल मात्र दिशा की ही हो सकती है, इससे अधिक स्थिरता निर्जीवता होती है। (पत्र 88)

❖ ❖ ❖

एक अवस्था तक अभिमान व्यक्ति में विकास के लिये आवश्यक होता है। स्वाभिमान के बिना प्रायः लोगों के लिये काम बेगार हो जाता है। परन्तु व्यक्ति आगे बढ़ते बढ़ते एक स्थिति को प्राप्त कर सकता है जब स्वाभिमान के अभाव में भी काम बेगार नहीं होता। (पत्र 88)

❖ ❖ ❖

सेवा न केवल युगधर्म है, यह तो विकास का नियम ही है। इसके बिना भी व्यक्ति सेवा करता है परन्तु समाज का काम करने वाला प्रत्येक व्यक्ति सेवा करता है - अध्यापक भी और बनिया भी, यदि वह अपने काम को ठीक करता है तो। इसमें क्या सन्देह? एक लेखक भी समाज की सेवा करता है और मेरी समझ में एक जज और जेलर भी। सेवा इतनी व्यापक वस्तु है। इससे हमारे स्वधर्म के लिये हमेशा गुंजाइश है। राजनैतिक क्षेत्र में भी समाज का प्रत्येक व्यक्ति अपने ढंग से कुछ कर सकता है। (पत्र 88)

❖ ❖ ❖

Letters to Seekers

Letter No. 26 : Shri Ram : Saroj Batika,
Jogendranagar.

04.01.1945

Dear Ram Chandra Jee,

I have already sent the reply to your letter from this very place. I have chosen to write again under the spell of this chilly cold in dripping rain in the hills of Kangra.

The intelligent mind is ever making an effort to grasp the Reality in its own terms but there are great limitations. The understanding through the mind must of necessity be in terms of the mind, and the limitations of world of its experience. That understanding (expression) can never be of the Reality as such; it can be at the most a faithful picture (view) of the reality in the available colours. To understand the Reality as such we have to enter the Reality consciousness, which can be more simply put as 'being one with it'. This I call Samadhi-gyana which dispenses with all via media, the sources of aberrations and errors, the veils between the knower and the known. That state 'of being one' with Reality can only be attained when we try to get beyond the mind. When we try to understand through the mind, we are not one with it. To get beyond we have to take a stand above the mind, to become a disinterested witness of the mental operations, knowing fully well the limitations of them all. This will gradually put you in touch with the stillness beyond the mind and you will go ahead towards the state of oneness with the Reality.

1. In our work for spiritual advancement, we have to keep a few things in view always:-

Our views must be changing as we get ahead according as our stand in the spiritual path changes. Therefore there must be no impatience about fixing Reality in terms of intellectual terminology once for all. Who knows where the infinite 'finites'? An ever evolving intellect and ever heightening spiritual experience are the two terms of the spiritual expression. Why should we not always be prepared to yield to a more evolved future?

This should not frighten. As far as spiritual experience goes, we know that we are walking on terra firma. Every passing moment is taking us towards perfection.

I am not putting forth agnosticism as such. I am only driving at the fact that full expression of the Reality in terms of the mind may not have finality. This I call intellectual self-surrender.... rather, the first step to it (which is) 'keeping the mind open'!

2. That we shall stop short on the way to the perfection may be another fear. If one is sincere, if one is open minded, if one looks to the Highest to lead him on and above all if he is not impatient at all, I see no reason why he may stop short on the way. The One that has led us on will lead us on, must lead us on. The burden is His, not mine, and I should add, in the same breath, 'the credit also is His, not mine'. But how to be sure of the conditions? Pray for them and they will be had for the asking. His munificence is too well known to fear a refusal. The Powers of light shall shed their sweet mellow and guide you

on to the greatest heights, whatever they be. After all what seems to be the greatest to the present consciousness may be the greatest from the view point of the lightest consciousness. Then why limit yourself by a specific demand. Let us learn to depend upon the wisdom of the Highest. 'I have chosen you and you shall chose for me, my Lord'. When I say this, I mean it. 'The Reality is one, the ultimate, my Lord is one, the Highest, ' and I mean Him. Behind, far behind, I leave the quagmire of intellectual differentiations of the Purshottama, the Nirguna, and so on. Such a prayer is an iron grip which nothing can resist. "The Citadel of heaven is taken by storm", said Jesus, the Christ.

I may be a child walking on the pathway of perfection, the Temple of Reality, but I go bravely, I go confidently, I go humbly, because my Lord is with me, nay because I rest in His very bosom, the place of greatest security. Personalities come and go at his beck and call. I honour them all but assign them no more finality than their due. I honour Him and in honouring Him, I honour the whole universe, myself included.

With blessings and love,

Yours in the Lord,

Ramanand

यह संसार भी एक सपना है

किसी देश में एक किसान रहता था। वह बड़ा ज्ञानी था। किसानी करता था। स्त्री थी, एक लड़का बहुत दिनों के बाद हुआ था। उसका नाम हारू था। बच्चे पर माँ और बाप, दोनों का प्यार था; क्योंकि एकमात्र वही नीलमणि – जैसा धन था। किसान धर्मात्मा था। गाँव के सब आदमी उसे चाहते थे। एक दिन वह खेत में काम कर रहा था, किसी ने आकर खबर दी, हारू को हैजा हो गया है। किसान ने घर जाकर उसकी बड़ी दवादारू की, परन्तु अन्त में लड़का गुजर गया। घर के सब लोगों को बड़ा शोक हुआ, परन्तु किसान को जैसे कुछ भी न हुआ हो। उलटा वही सबको समझाता था कि शोक करने का कोई मतलब नहीं है। फिर वह खेती करने चला गया। घर लौटकर उसने देखा, उसकी स्त्री रो रही है। उसने अपने पति से कहा – 'तुम बड़े निष्ठुर हो, लड़का जाता रहा और तुम्हारी आँखों से आँसू तक न निकले!'

तब उस किसान ने स्थिर होकर कहा – 'मैं क्यों नहीं रोता, बतलाऊँ? कल मैंने एक बड़ा भारी स्वप्न देखा। देखा कि मैं राजा हुआ हूँ और मेरे आठ पुत्र हैं। बड़े सुख से हूँ। अचानक दूसरे राजा ने मेरे राज्य पर आक्रमण किया और युद्ध में मेरे आठों पुत्र मारे गये। अब मैं स्वयं युद्ध-भूमि में जाने के लिये घोड़े पर सवार हुआ और महल से निकला। अचानक ठोकर लगने से घोड़े-सहित मैं भी गिर पड़ा। फिर मेरी आँख खुल गयी। देखा तो मैं चारपाई से नीचे गिरा हूँ। अब मुझे बड़ी चिन्ता है, अपने उन आठ लड़कों के लिये रोऊँ या तुम्हारे इस एक लड़के हारू के लिये रोऊँ?'

किसान ज्ञानी था, इसीलिये वह देख रहा था, स्वप्न की अवस्था जिस तरह मिथ्या थी, उसी तरह जागृति की अवस्था भी मिथ्या है, एक नित्य वस्तु केवल आत्मा ही है। यह संसार तो एक सपना है।

भागवत के मोती

अप्रैल 2023 अंक से पत्रिका में श्रीमद्भागवत के चुने हुए सन्देश छपने आरम्भ हुए हैं। इस अंक में प्रस्तुत है इन सन्देशों की दसवीं कड़ी –

46. दान, अपने धर्म का पालन, नियम, यम, वेदाध्ययन, सत्कर्म और ब्रह्मचर्यादि श्रेष्ठ व्रत – इन सबका अन्तिम फल यही है कि मन एकाग्र हो जाये, भगवान् में लग जाये। मन का समाहित हो जाना ही परम योग है।

– भागवत 11.23.46

47. सचमुच मन बड़ा शत्रु है। इसका आक्रमण असह्य है। यह बाहरी शरीर को ही नहीं, हृदयादि मर्मस्थानों को भी बेधता रहता है। इसे जीतना बहुत ही कठिन है। मनुष्य को चाहिए कि सबसे पहले इसी शत्रु पर विजय प्राप्त करे; परन्तु होता यह है कि मूर्ख लोग इसे तो जीतने का प्रयत्न करते नहीं, दूसरे मनुष्यों से झूठमूठ झगड़ा-बखेड़ा करते रहते हैं और इस जगत के लोगों को ही मित्र-शत्रु-उदासीन बना लेते हैं।

– भागवत 11.23.49

48. यदि मान लें कि मनुष्य ही सुख-दुःख का कारण है, तो भी उनसे आत्मा का क्या सम्बन्ध? क्योंकि सुख-दुःख पहुँचाने वाला भी मिट्टी का शरीर है और भोगने वाला भी। कभी भोजनादि के समय यदि अपने दाँतों से ही अपनी जीभ काट जाये और उससे पीड़ा होने लगे तो मनुष्य किस पर क्रोध करेगा?

– भागवत 11.23.51

49. उद्धव जी! इस संसार में मनुष्य को कोई सुख या दुःख नहीं देता, यह तो उसके चित्त का भ्रम मात्र है। यह सारा संसार और इसके भीतर मित्र, उदासीन और शत्रु के भेद अज्ञानकल्पित हैं। इसलिये प्यारे उद्धव, अपनी वृत्तियों को मुझमें तन्मय कर दो और इस प्रकार अपनी सारी शक्ति लगाकर मन को वश में कर लो और फिर मुझ में ही नित्ययुक्त होकर स्थिर हो जाओ। बस, सारे योगसाधन का इतना ही सार-संग्रह है।

– भागवत 11.23.60-61

50. आत्मा प्रकृति के स्वरूप, धर्म, कार्य, लेश, सम्बन्ध और गन्ध से भी रहित है। उसे कभी कहीं किसी के द्वारा किसी भी प्रकार से द्वन्द्व का स्पर्श नहीं है। वह तो जन्म-मृत्यु के चक्र में भटकने वाले अहंकार को ही होता है। जो इस बात को जान लेता है, वह फिर किसी भी भय के निमित्त से भयभीत नहीं होता।

– भागवत 11.23.57

साधना परिवार की विभूतियाँ

डॉ. गणेश शंकर 'बन्धु' जी (गतांक से आगे)

प्रिय पाठको,

(डॉ. गणेश शंकर 'बन्धु' जी की जीवनी की दो कड़ियाँ गत दो अंकों में प्रकाशित हो चुकी हैं। इस अंक में प्रस्तुत है उनकी जीवनी की तीसरी और अन्तिम कड़ी।)

गतांक में हमने देखा कि कितनी श्रद्धा से ओतप्रोत होकर श्री बन्धु जी ने पूज्य गुरुदेव के प्रति अपने भाव प्रकट किये हैं। उनकी जीवनी में हमने यह भी पढ़ा कि श्री बन्धु जी ने अनेकों काव्य और गद्य रचनाओं का सृजन किया था। इस अंक में हम उल्लेख करेंगे उन काव्य रचनाओं का जो उन्होंने पूज्य गुरुदेव की स्तुति में लिखी हैं। सर्वप्रथम अवलोकन करते हैं इस गज़ल का –

यह बन्धु जी रहा है गुरुदेव के सहारे।
कोई नहीं है उसका वह फिर किसे पुकारे॥
यह जग प्रयोगशाला करके प्रयोग देखे।
ऐसा मिला न कोई भ्रम से हमें उबारे॥
ये चमकती दिशायें ये रूप-रंग-मेले।
देते हमें प्रलोभन नभ के तमाम तारे॥
खोये सभी अहं में पर की किसे है पीड़ा।
जो नाव को लगा दे मझधार से किनारे॥
फिर भी न कोई चिंता उत्साह कम नहीं है।
गुरुदेव-हाथ हरदम है शीश पर हमारे॥

उपरोक्त काव्य रचना के अतिरिक्त हमें एक और अत्यन्त महत्वपूर्ण रचना प्राप्त हुई है जिसका शीर्षक है – **'स्वामी रामानन्द बावनी'**। ऐसा प्रतीत होता है कि किसी समय श्री बन्धु जी इतने भाव विभोर हो गये होंगे कि उनकी लेखनी से पूज्य गुरुदेव की स्तुति में एक साथ बावन चौपाइयाँ प्रस्फुटित हो गईं। प्रस्तुत हैं पूज्य स्वामी जी की स्तुति में लिखी गई वे बावन चौपाइयाँ –

श्री स्वामी रामानन्द बावनी

सरल स्वभाव, सुरुचि, मृदुभाषी। प्राणिमात्र के हित-अभिलाषी॥
तन विचार, मन के उज्ज्वल। राम नाम का चिन्तन प्रतिपल॥
कोमल चित, करुणा के सागर। सेवा, त्यागपूर्ण नयनागर॥
जग-सेवक, जन-जन उपकारी। संत, ऊर्ध्वरेता, ब्रह्मचारी॥
गुरुवर गीता के बहु ज्ञाता। जाप, ध्यान में अति निष्णाता॥
सब के प्रिय, अति कोमल मन के। गुण वर्णनातीत हैं इनके॥
भक्ति-तरंगिनि में बहते थे। सदा मुस्कराते रहते थे॥
भ्रमण किया सम्पूर्ण देश में। जिज्ञासु बन साधु वेश में॥
घर घर सरल भक्ति पहुँचाई। आदि-शक्ति की ज्योति जलाई॥

सभी तीर्थ धामों की स्मृतियाँ। भक्ति प्रधान रचीं बहु कृतियाँ॥
उभय बार कैलाश धाम जा। पुलकित हुए दिव्य दर्शन पा॥
साधन-पथ, सब एक समाना। गुरु ने रंचक भेद न माना॥
नारि मात्र को जननी माना। उसका शक्ति-रूप पहिचाना॥
जाप, ध्यान, पूजन सुखकारी। साथ-साथ करते नर-नारी॥
जब धारा संन्यास प्रवर ने। पैसा नहीं छुआ गुरुवर ने॥
साधन-पद्धति-क्रम है ऐसा। नहीं चढ़ाया जाता पैसा॥
इष्ट मानते सदा राम को। जग-प्रेरक, सुख-शान्ति-धाम को॥
गुरुवर प्यार करें सब को ही। आराधन-पद्धति अवरोही॥
ग्राम दिगोली थल अति पावन। अल्मोड़ा का प्रान्त सुहावन॥
चीड़-पत्तियाँ बना बिछावन। करते रहे तपस्या-साधन॥
सेवा-रत, जीवन निष्कामी। बने ग्राम-जन प्रिय अनुगामी।।
क्षमता थी बन जाते अफसर। रहे विश्व-विद्यालय टॉपर॥
पर, समाज का कर हित-चिंतन। त्याग दिए सारे सुख-साधन॥
धन-वैभव, पद, नाम कमाना। स्वामी जी ने कभी न जाना॥
राम नाम का लिये सहारा। बिता दिया निज जीवन सारा॥
मेटइ सकल विघ्न परितापू। राम नाम का पावन जापू॥
इष्टदेव के सच्चे साधक। राम नाम के सिद्ध उपासक॥
किसी बात का लोभ न उनको। अनुशासित रखते थे मन को॥
बता सरलतम साधन-पद्धति। भरी सभी के उर नूतन गति॥
याचन से है बड़ी प्रार्थना। सेवा से नहिं श्रेष्ठ साधना॥
कर्तव्यों से मुख मत मोड़ो। सेवा प्रथम, साधना छोड़ो॥
कुष्ठी साधु के व्रण धोये। सुविधा के सब साज सँजोये॥
की कपोत-शावक रखवाली। कोई भिक्षुक गया न खाली॥
निज नौकर को पीठ चढ़ाकर। ले जाते थे छत के ऊपर॥
सहपाठी जन अति अनुरागी। अपने को मानें बड़भागी॥

शिष्यों का मल मूत्र उठाया। कभी न रंचक मुँह बिचकाया॥
सेवा में ऐसे थे खोये। भक्तों के जूते तक धोये॥
गुरुवर सब की सेवा करते। हर संभव पीड़ायें हरते॥
नाम जाप के अति ही पोषक। पाकर प्रभु प्रसाद संतोषक॥
सचमुच वह कितना बड़भागी। जो गुरुवर चरणन अनुरागी॥
वे हैं केवल ज्योति उपासक। आदि शक्ति के आज्ञा पालक॥
गुरु को चिन्ता सदा हमारी। मैं गुरु पर जाऊँ बलिहारी॥
मेरे कारण करण वही हैं। मेरे अशरण शरण वही हैं॥
हर लेते हैं ताप निरंतर। गुरुवर ऐसे शीतल निर्झर॥
मुझे न दिखता कोई दूजा। जिसकी करूँ निरन्तर पूजा॥
जन्म स्थान ललितपुर झाँसी। अमृतसर के मूल निवासी॥
बीसलपुर गुरु केन्द्र प्रतिष्ठित। काशीनाथ शिष्य प्रिय वांछित॥
सृजित किया साहित्य अलौकिक। हरने को विपदाएँ भौतिक॥
कनखल हरिद्वार अभिरामा। रामानन्द-साधना धामा॥
साधन-केन्द्र, संस्कृति-रक्षक। राम-भक्ति का कुशल प्रशिक्षक॥
आध्यात्मिक विचार जग जायें। जग के सभी कलुष भग जायें॥
हो अध्यात्म विकास सभी में। भर जाये उल्लास सभी में॥
जो सज्जन, वे करहिं न रोषू। दें न कभी औरों को दोषू॥
स्वामी जी के पावन चरना। बंदनीय कलि-कल्मष हरना॥

सन् उन्नीस सौ बावन, अप्रैल, प्रभु-आधीन।
पंद्रह, मंगल-प्रात ही, हुये ब्रह्म में लीन॥
स्वामी-जी के शिष्य हैं जो भी साधक वृन्द।
उनकी पद-रज भाल पर मैं धारूँ सानन्द॥

तो इतने महान् थे हमारे गुरुदेव स्वामी रामानन्द जी महाराज और इतने-इतने विद्वान और श्रद्धावान् थे उनके ये शिष्य। पूज्य गुरुदेव के साथ-साथ हम आज उनके भक्तों को भी नमन करते हैं।

इसके साथ ही श्री बन्धु जी की जीवनी की शृंखला सम्पूर्ण होती है।

– जय गुरुदेव महाराज

पूज्य गुरुदेव महाराज के साथ साधकों के संस्मरण

सम्भवत: थोड़े ही साधक जानते हैं कि सद्गुरु स्वामी रामानन्द जी बहुत पहले से अपने रोग के विषय में जानते थे कि उनके रोग का इलाज असम्भव है पर साधकों के आग्रह के आगे उन्हें झुकना पड़ा। सभी साधक चाहते थे कि गुरुदेव अपना इलाज़ अवश्य करायें। इस विषय में कुछ नामों का ज़िक्र करना चाहूँगा।

1. इस क्रम में सर्वप्रथम आती हैं **साधिका तारा रेखी जी** जिन्होंने अन्तिम समय में गुरुदेव की अनुपम सेवा की। मलमूत्र की सफाई, कफ बलगम को दूर करना, कपड़ों का धोना और अन्यान्य कार्यों के माध्यम से उन्होंने अपने जीवन को होम कर दिया। यह कार्य वह स्वामीजी की चिर-समाधि तक नि:स्वार्थ करती रहीं। उपरोक्त संस्मरण मैंने जानबूझ कर चुना क्योंकि इसमें सद्गुरु की साधना प्रणाली के सुनहरे सूत्र पिरोये गये हैं। सर्वप्रथम, वह सच्चे योगी थे और वह जानते थे कि भविष्य में उनकी यात्रा रुग्णता से चिर-समाधि पर ही जाकर रुकेगी। वह भूत, वर्तमान और भविष्य को जानते थे। वह योगी के अतीन्द्रियता के भाव में पूर्ण निष्णात थे। दूसरा, अपनी साधिका के माध्यम से नि:स्वार्थ सेवा का सन्देश देना चाहते थे। तीसरा तथ्य यह कि गुरुदेव संस्कारों के क्षय होने के सिद्धान्त को बलपूर्वक सिद्ध करने में कोई कोताही नहीं बरतते थे। उन्होंने स्वयं का उदाहरण प्रस्तुत करके सिद्ध कर दिया कि प्रभु श्री राम जी के सिद्धान्त में वह योगी होते हुए भी अटूट विश्वास रखते हैं।

अस्तु, जो साधक साधना में अपने जीवन को होम करने में सक्षम हैं वह कोई भी हों – चाहे साधारण साधक या सद्गुरु सरीखा महामानव, उसे भी प्रभु राम जी प्रदत्त सिद्धान्त को मानने की बाध्यता है।

❖ ❖ ❖

2. सद्गुरु की सेवा के इस क्रम में **माँ सुमित्रा जी** की याद बरबस आ रही है। माँ ही कहकर गुरुदेव सुमित्रा जी को बुलाते थे। जब उनकी हालत अत्यन्त गम्भीर हो गई तो उन्होंने स्वयं पत्र लिखकर माँ जी को कनखल बुला लिया। दिन भर माँ अस्पताल में उनकी सेवा सुश्रूषा करतीं और रात्रि में उनके अनन्य भक्त देवकीनन्दन पर यह भार रहता था। कंगाली में आटा गीला हो गया और माँ सुमित्रा को बेटी की ससुराल से तार मिला कि उनकी बेटी की तबियत खराब है और उन्हें दो दिन के लिये आज्ञा मांगकर जाना पड़ा।

उधर अत्यधिक दस्तों के कारण गुरुदेव की हालत इतनी बिगड़ गई कि वह गिर पड़े; किन्तु योग बल से इस स्थिति में भी गुरुदेव मुस्कुराते रहे। सेवा में लगे लोग यह दृश्य विस्फारित नेत्रों से देखते रहे। गुरु देव भयंकर दर्द से पीड़ित होने पर भी नहीं कराह रहे थे। अवतारी पुरुषों में यह सब सहज रूप से चलता रहता है। वे जानते हैं इस भ्रमात्मक जगत में यह सब एक प्रकार का नाटक है जो हर पात्र को खेलना पड़ता है। लक्ष्मण के मूर्छित होने की घटना से हम सब अवगत हैं कि कैसे श्री राम जी आर्त स्वर में विलाप करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। श्री राम गुरुदेव के इष्ट देव हैं और जगत हेतु यह लीला कर रहे हैं। क्यों न उनके शिष्य में यह सब लीला घटित होना स्वाभाविक हो ?

अस्तु, हम सभी उनके जीवन से यह सीख ले सकते हैं कि इस नश्वर जगत में प्रभु ने नाट्यक्रिया हेतु जीव को धरा पर उतारा है। ऐसा होने पर भी मूढ़ विलाप करते हैं और विवेकी सहज भाव से नाटक में प्रतिभागी बनकर साक्षी भाव से कौतूहलपूर्वक इस लीला का आनन्द लेते हैं। आनन्द लो और इस रमणीय दिखने वाले जगत को समता और सन्तोष से ही व्यवहार में लाओ; यही जगत सुखकारी प्रतीत होने लगेगा।

जीवन के रहस्यों का पर्दाफाश अपने जीवन के माध्यम से अपने साधकों के समक्ष प्रस्तुत कर उनके कल्याण का मार्ग सुनिश्चित करने में गुरुदेव पारंगत थे। उनकी यह सीख कण्ठ से नहीं वरन् जीवन के माध्यम से हृदयंगम करने की भी विचित्र लीला है। साधना में

रत साधक ही यह रहस्य समझ पाते हैं।

❖ ❖ ❖

3. इसी क्रम में बीसलपुर शुगर मिल के वरिष्ठ अधिकारी **श्रद्धेय शुक्ला चाचा जी** की याद आती है जो सद्‌गुरु की नज़र में साधना के सच्चे जानकार थे। उनकी साधना की पद्धति सद्‌गुरु प्रदत्त प्रणाली के सबसे अधिक नज़दीक थी। वह सशक्त आदर्श थे गुरुदेव महाराज की नज़र में। साधना की प्रक्रिया को जानने और समझने हेतु सद्‌गुरु उनसे पाठ सीखने की सलाह देते थे। प्रारम्भ में श्री शुक्ला जी कृष्ण नाम का निरन्तर जाप करते थे। संयोगवश जब सद्‌गुरु महाराज भ्रमण करते हुए बीसलपुर पहुँचे तो उनकी दृष्टि अकस्मात् श्री शुक्ला जी पर पड़ी। हीरे की परख जौहरी ही जानता है और सद्‌गुरु जैसे अद्वितीय जौहरी की नज़रों से कुछ भी अछूता नहीं रह सकता। फिर शुक्ला जी जैसा हीरा कैसे छूट सकता था ?

साधनारत शुक्ला जी कृष्ण नाम की रटन में लगे हुए थे। गुरुदेव वहाँ पहुँचे तो उन्हें देखकर वह उठ खड़े हुए। सद्‌गुरु का उन्होंने स्वागत किया और अचम्भित होकर निहारने लगे। सद्‌गुरु ने अपने ओढ़े हुए दुशाले को शुक्ला जी के लिये बिछा दिया और उस पर बैठने का आग्रह किया और वह न चाहकर भी उस पर बैठने हेतु विवश हो गये। मानो कोई दिव्य शक्ति उन्हें आदेशित कर रही हो। जैसे ही वह बैठे, पूज्य गुरुदेव ने उनके सिर पर हाथ फेरा और कान के पास जाकर राम नाम की ध्वनि गुंजारित की। ऐसा करते ही कई वर्षों से कृष्ण नाम का पुजारी अनायास ही राम नाम जपने लगा।

यहाँ साधकों को समझ लेना चाहिए कि तत्वत: राम और कृष्ण नाम भिन्न होते हुए भी अभिन्न हैं।

गुरुदेव जी जैसी दिव्यात्मा का यह करिश्मा ही है कि उनके सम्पर्क में आते ही शुक्ला जी उनके इशारे पर मानो नृत्य करने लगे। जिन साधकों ने शुक्ला जी का जीवन चरित्र पढ़ रखा है वे जानते हैं कि रिटायर होने के बाद उनका स्वास्थ्य बिगड़ने लगा। पुत्र की असमय मृत्यु ने उन्हें झकझोर कर रख दिया। पत्नी के वियोग से वह असह्य पीड़ा से मर्माहत हुए और उनकी देखभाल का भार उनके अनन्य अनुगामी सहयोगियों के कन्धों पर पड़ा। घर में भी बेटों के बंटवारे की गुहार लगाने पर वह टूट से गये। ऐसी विषम परिस्थिति में वह राम नाम की सतत् रट लगाये रहते थे। अनहद नाद में सदैव डूबे रहने के कारण उन्हें सब कुछ सहने की क्षमता सद्‌गुरु के दिव्य अनुग्रह के कारण जीवन पर्यंत मिलती रही। उनके द्वारा रचित गीतों का संग्रह पढ़ने से पता लगता है कि वह राम नाम के मुरीद हो गये थे। कानपुर के साधक और साधिकायें, जिनमें डा. पद्‌मा शुक्ला भी शामिल थीं, को उनके मुखारविन्द से प्रिय सन्तोष वर्मा जी के घर पर उनका सत्संग मिला। वह भी शुक्ला जी के जीवन के रोचक प्रसंग सुनाया करती थीं।

अस्तु, यहाँ यह समझना सामयिक होगा कि साधना पथ पर आरूढ़ साधकों को भी संस्कारों को क्षीण करके शून्य बनाना होता है। इस विषय में कोई अपवाद नहीं दिखाई पड़ता। स्वयं सद्‌गुरु को जीवन में भीषण यातनाओं का सामना करना पड़ा था।

❖ ❖ ❖

सभी साधकों से विनम्र निवेदन है कि ऐसे कष्टों को देखकर और जानकर विचलित न हों। राम जी के अनुग्रह की प्रतीक्षा करें और उनके द्वारा परीक्षा में उत्तीर्ण होकर परम पद के अधिकारी बनें।

इस सन्दर्भ में बरबस मुझे नरेन्द्र कुमार कविराज की ये मार्मिक पंक्तियाँ, जो सद्‌गुरु का सटीक मूल्यांकन कर रही हैं, याद आ रहीं हैं।

'जीवन महान् पुरुषों के यह ध्यान धराते सारे।
यदि चाहें तो हो सकते हैं जीवन उच्च हमारे॥'

सच्चे साधक जानते हैं कि सद्‌गुरु साधारण मानव नहीं थे। वे महामानव ही नहीं थे अपितु धैर्य और शौर्य के जीवन्त आदर्श थे। बाल्यकाल में माँ ने उनका साथ छोड़ दिया और वह अपनी भाभी की छत्र छाया में पाले गये। वह शिशुवत रहे, इसीलिये उन्हें शिशुपाल नाम से अलंकृत किया गया। उनका आचरण ऐतिहासिक शिशुपाल से भिन्न था। वह डाह का प्रतीक था और

प्रभु कृष्ण द्वारा मारा गया। हमारे शिशु ठीक इसके विपरीत औदार्य और सहिष्णुता के प्रतीक थे। उनके स्वभाव में कटुता लेशमात्र भी नहीं पाई जाती। सहजता और सरलता का संगम सभी को बरबस अपनी ओर आकर्षित कर लेता था।

अस्तु, उनके जीवन से यह शिक्षा मिलती है कि सदैव प्रसन्न रहो। और अन्त समय में वह मुस्कराते हुए अनन्त में विलीन हो गये। माँ के अभाव की पूर्ति सुमित्रा जी ने की थी जिन्हे सद्गुरु माँ कहकर पुकारते थे। विडम्बना ही है कि वह अन्त समय में माँ के वात्सल्यमय आँचल से वंचित रहे क्योंकि अस्पताल के नियमानुसार रात्रि में महिला को रुकने की इजाज़त नहीं थी। पूर्ण थे वह इसलिये इस दंश से मर्माहत होते हुए भी वह इस जगत से भौतिक रूप से तो चले गये पर आध्यात्मिक जगत में वह सदैव शालीनतापूर्वक चमकते रहेंगे और अपनी दिव्य अनुभूतियाँ, जो गीता विमर्श में अंकित हैं, के माध्यम से सभी साधकों को प्रेरित करते रहेंगे।

हरि प्रकाश सिंह चौहान

जरूरतमन्द की मदद

अफ्रीका में एक छोटा-सा देश है बासुतोलैण्ड! यहाँ का अधिकांश क्षेत्र घने जंगलों से घिरा हुआ है। इन्हीं जंगलों के बीच कावु गाँव में बिसाऊ नामक युवक रहता था। वह जंगल में शिकार करके ही अपना गुजारा करता था। एक दिन बिसाऊ जंगल में शिकार करने गया। शिकार की तलाश में वह काफी दूर निकल गया। इस बीच दोपहर हो गयी। बिसाऊ बुरी तरह थक गया था। भूख-प्यास से बेहाल होकर वह जंगल के भीतर बढ़ता गया। चलते-चलते वह सासे नामक शहर में पहुँच गया। वहाँ उसे एक हवेली दिखायी दी। बिसाऊ ने दरवाजा खटखटाया तो एक गोरा साहब निकलकर बाहर आया। गँवई वेशभूषा वाले एक काले युवक को देख उसने गुस्से से पूछा – 'क्या बात है?' बिसाऊ सहम गया। बोला – 'साहब! प्यास से दम निकला जा रहा है। पानी पिलाकर रहम कीजिये।'

पर गोरे साहब को दया नहीं आयी। उन्होंने उसे अपमानित कर बाहर निकाल दिया। बिसाऊ किसी तरह गिरते-पड़ते अपने घर पहुँचा।

कई महीने बाद की बात है। एक दिन वही गोरे साहब जंगल में शिकार खेलने गये, पर उस दिन उन्हें कोई शिकार नहीं मिला। जंगल में भटकते-भटकते वे बिसाऊ के गाँव में पहुँच गये। तब तक रात हो चली थी। वे एक झोपड़ी के सामने पहुँचे। वह झोपड़ी बिसाऊ की थी। गोरे साहब ने आवाज़ लगायी। बिसाऊ बाहर निकला। जैसे ही उसकी नज़र उन पर पड़ी, वह उन्हें पहचान गया, पर गोरे साहब उसे पहचान नहीं पाये। उन्होंने बिसाऊ से रातभर के लिये आश्रय माँगा। बिसाऊ तुरन्त तैयार हो गया।

उसके पास जो भी रूखा-सूखा खाना था, उसी से गोरे साहब की सेवा की। गोरे साहब को सोने के लिये अपना बिस्तर दिया और खुद ज़मीन पर सोया। सुबह हुई तो साहब ने बिसाऊ को धन्यवाद दिया और शहर का रास्ता पूछा। बिसाऊ ने कहा – चलिये, मैं आपको छोड़ आता हूँ।

साहब की हवेली के पास पहुँचकर बिसाऊ ने वापस जाने की इजाजत माँगी। गोरे साहब ने कहा – 'तुमने मेरा इतना आदर-सत्कार किया। अब मुझे भी तुम्हारे लिये कुछ करने दो। चलो, चलकर मेरे साथ नाश्ता करो।' बिसाऊ बोला – 'साहब! आप मेरी सेवा के बदले में मेरा सत्कार करना चाहते हैं? यह ठीक नहीं है।' फिर उसने पुरानी बात साहब को याद दिलायी और कहा – 'जरूरतमन्द व्यक्ति की मदद हमेशा करनी चाहिए। आखिर सभी को एक-दूसरे की ज़रूरत पड़ती है। यही इन्सानी धर्म भी है।' इतना कहकर बिसाऊ अपने गाँव की ओर चल पड़ा। गोरे साहब का सिर शर्म के मारे झुक गया।

जरूरतमन्द की सेवा ईश्वर की सेवा है।

बाल शिविर का विवरण

साधना धाम हरिद्वार में दिनांक 28 मई 2025 से 1 जून 2025 तक बाल शिविर का आयोजन किया गया जिसका संचालन श्री अविनाश जी ग्रोवर ने किया। इस शिविर में बीसलपुर, बरेली, दिल्ली आदि से आये हुए 55 बालक तथा 70 वयस्कों ने भाग लिया। बालकों ने बड़े उत्साह से, निष्ठापूर्वक शिविर के नियमों का पालन करते हुए सभी कार्यकर्मों में भाग लिया। जाप का आवाहन बालकों द्वारा किया गया। प्रातःकाल में जाप के पश्चात् योग तथा भ्रमण होता था। रात्रि में शयन से पूर्व विनोद गोष्ठी होती थी जिसमें बालकों के मनोरंजन के अतिरिक्त ज्ञानवर्धन भी होता था। बच्चे अपना-अपना अनुभव साझा करते थे तथा कहानियाँ व कवितायें सुनाते थे।

गीता पाठ प्रतियोगिता का भी आयोजन किया गया जिसमें बालकों ने अपनी योग्यता का प्रदर्शन किया। अच्छा प्रदर्शन करने वाले बच्चों को पारितोषिक दिये गये। अन्य सभी बालकों को प्रमाण पत्र भेंट किये गये।

शिविर की पूर्ति के बाद सभी बालकों को अभिभावकों की देखरेख में पिकनिक पर ले जाया गया।

❖ ❖ ❖

दिगोली साधना शिविर का विवरण

गुरुदेव महाराज की असीम कृपा से विभिन्न स्थानों से आकर लगभग 60 साधक इस शिविर में सम्मिलित हुए। बड़े हर्षोल्लास के साथ 7 जुलाई 2025 को शिविर का शुभारम्भ हुआ। किन्तु दैवयोग से शिविर के प्रथम दिवस ही एक दुखद घटना घट गई। हमारे साधना परिवार के अहमदाबाद के सक्रिय साधक श्री पुरन्दर जी तिवारी का आकस्मिक निधन हो गया। यह एक बहुत ही स्तब्ध कर देने वाली और दुखद घटना थी जिससे शिविर के कार्यक्रम मे व्यवधान आना स्वाभाविक था। गुरुदेव महाराज की कृपा से सभी साधकों ने अपने को संभालते हुए आगे के कार्यक्रम सामान्य रूप से सम्पन्न किये। 8 तारीख को 36 घण्टे के जाप के पश्चात् गुरु पूर्णिमा का उत्सव बिना किसी ढोलक आदि के, सामान्य ढंग से मनाया गया।

❖ ❖ ❖

गुरु पूर्णिमा शिविर हरिद्वार

साधना धाम हरिद्वार में गुरु पूर्णिमा शिविर 2025 का शुभारम्भ दिनांक 5 जुलाई 2025 की अपराह्न को ड्यूटियाँ लगाने से हुआ जिसकी पूर्ति 10 जुलाई प्रात:काल में की गई। इस शिविर में लगभग 125 साधकों ने भाग लिया। प्रतिदिन सायंकाल के सामूहिक जाप से अगले दिन प्रात:काल के सामूहिक जाप तक अखण्ड जाप चलता रहा। दिनांक 7 जुलाई सायंकाल से आरम्भ करके 9 जुलाई प्रात:काल तक 36 घंटे का अखण्ड जाप किया गया। दिनांक 10 जुलाई को प्रात:कालीन सामूहिक जाप के पश्चात् भण्डारे के साथ मार्ग का भोजन देकर बहुत से साधकों को विदाई दी गई। कुछ साधक धाम में ठहर गये थे क्योंकि 11 जुलाई से श्रीमद्भागवत कथा ज्ञान यज्ञ प्रारम्भ होना था।

प्रवचन सार

बहन गीता जायसवाल जी

सुत दारा अरु लक्ष्मी पापिहु के भी होय।
सन्त मिलन अरु हरि भजन जग में दुर्लभ दोय॥

भगवान् को तत्त्व से जानना है। भगवान् के अतिरिक्त कुछ भी सत्य नहीं है। जैसे जल को चाहे मिट्‌टी के घड़े में रखो या पीतल के, रहता जल ही है; वैसे ही हम सब एक ही हैं, एक परम पिता की सन्तान हैं। हम दूसरों से द्वेष करके और अपनों से आसक्ति करके दुखी होते रहते हैं, यह उचित नहीं है। जो कुछ भी हो रहा है उसमें ईश्वर की कृपा ही समझें।

भगवान् ने गीता के अध्याय 7 के श्लोक 3 में बताया है कि हज़ारों मनुष्यों में से कोई एक ही भगवान् की ओर आता है और उनमें भी कोई एक ही भगवान् को तत्त्व से जान पाता है। कैसे रहना है, सहना है, कहना है – यह सब हमें सीखना है जो गीता के अध्ययन से सीख सकते हैं। गीता जीवन का सूत्र है जो स्वयं भगवान् के मुख से निकली है। गीता के अध्याय 10 के श्लोक 7 में कहा गया है जो पुरुष मेरी इस परमेश्वैर्यरूप विभूति को और योगशक्ति को तत्त्व से जानता है वह निश्चल भक्ति से युक्त हो जाता है, इसमें कोई संशय नहीं है।

बहन उमा शुक्ल जी

भगवान् ने गीता के अध्याय 7 के श्लोक 16 में समझाया है कि चार तरह के पुण्यवान भक्त मेरा भजन करते हैं – आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी तथा ज्ञानी। आर्त ऐसे भक्त होते हैं जो अत्यन्त दु:ख में जब कहीं कोई त्राण नहीं मिलता तो वे भगवान् को याद करते हैं और कहते हैं कि भगवन अब तो केवल आप ही मेरा सहारा हैं; जैसे द्रौपदी की लाज बचाने जब कोई नहीं आया तब उसने सब सहारे छोड़कर भगवान् को पुकारा तो भगवान् ने तुरन्त उसके कष्ट का निवारण किया; विभीषण जब रावण के द्वारा तिरस्कृत किये जाने पर भगवान् की शरण में आया तो उसकी रक्षा की। इसी प्रकार जो भी प्राणी संसार से त्रस्त होकर भगवान् की शरण में आता है या भजता है तो भगवान् निश्चय ही उसे अपनी शरण में ले लेते हैं। या तो उसका कष्ट का निवारण करते हैं या उसको सहने की शक्ति प्रदान करते हैं। दूसरे प्रकार के भक्त जिज्ञासु होते हैं जो भगवान् को जानने की इच्छा से भगवान् की शरण में आते हैं अथवा ज्ञान प्राप्ति के लिये या सिद्धियों के लिये। भगवान् उसको ज्ञान का मार्ग देते हैं पर उसमें समय लगता है।

तीसरे प्रकार के भक्त वे होते हैं जो कामना की पूर्ति के लिये अर्थात् मकान, पुत्र, मान, सम्मान आदि की प्राप्ति की इच्छा से भगवान् की भक्ति करते हैं। ऐसे भक्त प्रायः कामना की पूर्ति के बाद भगवान् को भूल भी जाते हैं।

चौथी प्रकार के भक्त ज्ञानी होते हैं जो भगवान् को अत्यन्त प्रिय होते हैं क्योंकि वे सत्य को जानते हैं। वे निष्काम भाव से भगवान् से जुड़ते हैं। वे ईश्वर से प्रेम करते हैं, उनके लिये ईश्वर ही सब कुछ है जैसे मीरा, कबीर, तुलसी आदि भक्त। ऐसा भी देखने में आता है कि जो भक्त आरम्भ में तो आर्त, जिज्ञासु अथवा अर्थार्थी होते हैं किन्तु कालान्तर में जब उनका भगवान् पर विश्वास जम जाता है तो वे निष्काम भाव से भक्ति करना आरम्भ कर देते हैं और ज्ञानी भक्त की श्रेणी में आ जाते हैं। निष्काम भक्ति में भगवान् की शरणागति अत्यन्त आवश्यक है।

बहन मीरा दुबे जी

गुरु शब्द के दो अर्थ होते हैं – (1) अन्धकार से प्रकाश की तरफ ले जाना और (2) तीनों गुणों से ऊपर उठाना।

गीता के अध्याय 14 के श्लोक 25 में बताया गया है कि जो मान और अपमान में सम है, मित्र और वैरी के पक्ष में भी सम है और सभी कर्मों में कर्तापन के अभिमान से रहित है, वह पुरुष गुणातीत कहा जाता है। इसलिये हमें आसक्ति से रहित होकर अपना कर्म करना है; राम नाम के सहारे हमें अध्यात्म में आगे बढ़ना है। जब माँ, महाशक्ति हमारे अन्दर शोधन करती है तब हमें सत्संग की भूख लगती है। हमें निर्मल मन से और अनन्य भाव से निरन्तर जाप करना है। प्रेमा–भक्ति गोपियों से सीखी जा सकती है। भगवत–प्राप्ति तब होती है जब गुरु की कृपा होती है और भगवान् की कृपा होती है।

भजन करने से क्या होता है –

1. आत्म शक्ति जाग्रत होती है।
2. भगवती चेतना का अवतरण होता है जिससे मन बुद्धि का शोधन होता है।
3. दिव्य शक्ति से सम्बन्ध होता है अर्थात् भगवती चेतना से युक्त होते हैं। फिर हमें कहीं जाने की ज़रूरत नहीं होती।

ईश्वर की प्राप्ति के लिये साधन तो करना ही पड़ता है। साधन तीन प्रकार के बताये गये हैं –

1. बाह्य साधन – सत्य, प्रेम, सेवा।
2. आन्तरिक साधन – अभीप्सा, समर्पण, ग्रहणशीलता।
3. आभ्यान्तरिक साधन - शान्ति, स्थिरता, समता।

राम नाम की औषधि खरी नियत से खाय।
अंग रोग व्यापे नहीं महारोग मिट जाय॥

हम बाह्य साधन से शुरु करके आन्तरिक और फिर आभ्यान्तरिक में जाते हैं।

श्री सुभाष ग्रोवर जी

उपासना में श्रद्धा और विश्वास का होना ज़रूरी है। गीता के वचन हैं – संसार में श्रद्धा पापी से पापी मनुष्य को भी तार देती है। गीता के अध्याय 9 के श्लोक 30 में बताया गया है –

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः॥

मनुष्य शरीर का मिलना मुश्किल है, हमें उसका सदुपयोग करना चाहिए।

परमात्मा की प्राप्ति केवल इच्छा से होती है। हम इच्छा करते हैं सांसारिक सुख की। इससे हम ईश्वर की प्राप्ति नहीं कर सकते।

जड़, चेतन, परा, अपरा – सब मिलकर प्रकृति बनी है। परमात्मा में कोई परिवर्तन नहीं होता, जीव बदलता है। सन्त कबीर ने कहा है –

जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं।
प्रेम गली अति साँकरी, या में दो न समाहिं॥

अब अहंकार चला गया तो प्रभु मेरे अन्दर हैं। परमात्मा तो शुरु से मेरे थे और हमेशा मेरे साथ ही रहते हैं।

भगवान् ने गीता में कहा भी है – सत्य का अभाव नहीं होता है। परमात्मा अजन्मा है, उसका जन्म नहीं होता है और न मृत्यु होती है।

बहन गीता जायसवाल जी

हमारी साधना व्यावहारिक साधना है, भक्ति मार्ग की साधना है। जहाँ हो वहीं रहो, केवल अपने दृष्टिकोण को बदलो। राम नाम पर पूर्ण विश्वास करो।

हम संसार की भूल-भुलैया में खो जाते हैं और यह भूल जाते हैं कि **'बड़े भाग मानुष तन पावा'**। जब हम प्रभु से जुड़ेंगे तो ही सुखी रहेंगे। वो नज़र अधूरी है जो सुख देखती है और वो नज़र भी अधूरी है जो दुःख देखती है। नज़र वही पूरी है जो हर परिस्थिति में भगवान् का मंगलमय विधान देखती है। आध्यात्मिक उन्नति का मापदण्ड है –

1. बढ़ती हुई समता
2. शान्त होते हुए काम, क्रोध आदि और
3. विकसित होता हुआ प्रेम

हम दूसरों के बारे में अच्छा सोचें, अच्छा करें, उनके गुणों को देखें और हर एक से प्रेम करें। एक पन्थ, एक सन्त, एक ग्रन्थ और एक ही मन्त्र का सहारा लें।

बहन रमना सेखड़ी जी

शरीर जड़ और चेतन से बना है। जड़ में विकार भरे हैं, चेतन निर्मल है। गीता के अध्याय 6 के श्लोक 5 में कहा गया है –

'योगरूढ़ होने की इच्छा वाले मनुष्य को चाहिये कि वह अपने द्वारा अपना संसार समुद्र से उद्धार करे और अपने को अधोगति में न डाले; क्योंकि यह मनुष्य आप ही तो अपना मित्र है और आप ही अपना शत्रु है।'

पूज्य स्वामी जी ने कहा है – हम अपनी कमी को देखें। हमें सहज रहना है, अपने को बुराई के रास्ते से हटाना है। अपने कर्मों के अनुसार ही हमें अगला जन्म मिलेगा। सरल बनकर भक्त भगवान् से सब कुछ पा सकता है। हमें तिनके से भी नीचा और वृक्ष से भी सहनशील होना है। अपने मन को साधना है क्योंकि इन्द्रियाँ, बुद्धि, शरीर – सब मन के गुलाम हैं। जितना विषयों में आकर्षण होगा उतना ही हम दुखी होंगे।

सत्संग का अपरिमित लाभ होता है। सन्त तुलसीदास ने मानस में लिखा है –

तात स्वर्ग अपवर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग॥

जो हमारे हित में होगा वही भगवान् करेंगे। वो हमारे परम हितैषी हैं। आत्मा को हमें मालिक बनाना है। जो कर्म में लगे रहते हैं वो संयम में रहते हैं। काम, क्रोध हमारे ज्ञान को खा जाते हैं। जब विवेक जागृत होगा है तो बुद्धि स्वयं ही स्थिर हो जायेगी। हम ही अपने मित्र हैं और हम ही अपने शत्रु हैं। हमें राक्षसी प्रवृत्ति को पहचान कर बाहर करना है।

भाई रमेश चन्द्र गुप्त जी

चार प्रकार के भक्त भगवान् का भजन करते हैं – आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी। आर्त दुखी होकर भगवान् के पास आते हैं जब अन्य सब सहारे छूट जाते हैं। द्रौपदी और गजेन्द्र ने आर्त भाव से भगवान् को पुकारा था तो अविलम्ब सहायता की

थी। जिज्ञासु भक्त भगवान् को जानने की इच्छा से भगवान् की आराधना करते हैं। अर्थार्थी सकाम भाव से भजन करते हैं। ज्ञानी भक्त ऐसे होते हैं जिनको कुछ भी चाहना नहीं होती। वे केवल भगवान् को ही चाहते हैं। ऐसे भक्तों के मन में भगवान् सदैव बसते हैं। सन्त तुलसीदास ने रामचरितमानस में कहा है –

जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु तुम्ह सन सहज सनेह।
बसहु निरन्तर तासु मन सो राउर निज गेह॥

ऐसे जो भक्त होते हैं वे किसी से द्वेष नहीं करते, सबको मित्र समझते हैं, सब जीवों में करुणा का भाव रखते हैं, ममता से रहित होते हैं, काम क्रोध आदि विकारों से परे होते हैं, दूसरों के अपराधों को क्षमा करने वाले होते हैं, हर परिस्थिति में सन्तुष्ट रहते हैं, इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखते हैं, भगवान् की भक्ति में दृढ़ निश्चयी होते हैं। ऐसे भक्त भगवान् को अतिशय प्रिय होते हैं।

बहन सुशीला जायसवाल जी

व्याख्यान - 1

गीता अध्याय 7 के श्लोक 15 में बताया गया है कि दूषित कर्म करने वाले मूढ़ लोग (दुष्कृतिनो) मुझको नहीं भजते।

अगले श्लोक में कहा गया है कि उत्तम कर्म करने वाले (अर्थात् सुकृतिनो) चार प्रकार के भक्तजन मुझको भजते हैं।

अध्याय 16 में भगवान् ने दैवी सम्पदा और आसुरी सम्पदा को प्राप्त पुरुषों का वर्णन किया है। दैवी सम्पदा वाले पुरुषों में ये गुण होते हैं –

1. **भय का सर्वथा अभाव, अन्तःकरण की पूर्ण निर्मलता, तत्त्वज्ञान के लिये ध्यानयोग में निरन्तर दृढ स्थिति, सात्त्विक दान, इन्द्रियों का दमन, भगवान् देवता और गुरुजनों की पूजा तथा अग्निहोत्र, सत्साहित्य का पठन पाठन और अन्तःकरण की सरलताः** भगवान् का भक्त अभय रहता है। वो जानता है कि वो भगवान् का अंश है, उसे किसी चीज़ का भय नहीं है। भय दो प्रकार का होता है – बाहरी भय जैसे चोर, डाकू न आ जाये। जो सत्संग करते हैं वो डरते हैं कि उनसे कहीं गुरुजनों का अपमान न हो जाये। दूसरा होता है आन्तरिक भय। जो सही मार्ग में आ चुके हैं वे अन्दर से डरते हैं कि कहीं पुराने संस्कारों का फल न उभर आये। जब तक हम पूर्ण नहीं होते तब तक भय बना रहता है।
2. **अन्तःकरण की पूर्ण निर्मलताः** संसार से राग न होकर भगवान् से अनुराग होना, मन बुद्धि, इन्द्रियाँ – सब भगवान् में लग जायें। भगवान् से दूर होने पर मल, विक्षेप आदि का आवरण आ जाता है जो राम नाम के जाप से दूर हो जाता है।
3. **तत्त्व ज्ञान के लिये योग में दृढ़ निश्चय अर्थात् हर घटना को भगवान् से जोड़नाः** सुख, दुःख, मान, अपमान – सब कुछ आयेगा। नाम के द्वारा ईश्वर से जुड़े रहना है।
4. **दानः** धन, वस्त्र, स्वर्ण दान के अतिरिक्त अभय दान भी दिया जाता है। जब कोई प्राणी विपत्ति में पड़ा हो तो उसे सही रास्ता दिखाना, लोगों को ज्ञान की शिक्षा देना, दूसरों को भगवान् के रास्ते पर चलाना भी दान है। पुस्तकें बाँटना भी दान है।
5. **इन्द्रियों का दमनः** जबरदस्ती का संयम नहीं करना है। क्या करना है, क्या नहीं करना है – यह हमें देखना है, सदा सचेत रहना है।
6. **यज्ञः** ईश्वर के लिये कर्म यज्ञ है। जप यज्ञ करो। यज्ञेश्वर के लिये कर्म किया जाये समुचित

वृत्ति से –

1. भगवान् के लिये
2. भगवान् के द्वारा
3. भगवान् से।

7. **स्वाध्यायः** सभी शास्त्रों का अध्ययन करें। अपने को पढ़ना – हमने क्या किया, क्या देखा – यह भी तप है। कर्तव्य पालन में जो कष्ट प्रतीत होता है वह हम ख़ुशी से उठायें चाहे वह शरीर का तप हो, वाणी का तप हो या मन का।
8. **मन और वाणी से सरल रहनाः** यह भी दैवी सम्पदा है।

व्याख्यान - 2

शिविर की पूर्ति करने से पूर्व बहन सुशीला जी ने कुछ मुख्य बातें साधकों को याद रखने के लिये कहीं –

गीता के अध्याय 15 में भगवान् ने कहा है – जो मुझे क्षर से अतीत और अक्षर से उत्तम मानता है वह भजन के अलावा और कुछ करता ही नहीं है। भजन दो प्रकार से होता है – पहला देव दर्शन, मन्दिर जाना, पठन-पाठन आदि और दूसरा भगवान् की आज्ञा का पालन करना।

भगवान् की मुख्य तीन आज्ञा हैं –

1. जैसा व्यवहार हम दूसरों से अपने लिये चाहते हैं वैसा हम स्वयं करें।
2. प्रत्येक प्राप्त वस्तु का सदुपयोग करें। तन से सत्संग, सेवा आदि, धन को सत्कर्मों में व्यय करना और सबको भगवान् के बच्चे समझकर उनके प्रति अपने कर्तव्य का पालन करना।
3. अपने कर्तव्य कर्म को ख़ुशी-ख़ुशी करें।

पुकार को तीव्र करने के चार साधन हैं – सत्संग, स्वाध्याय, मनन और प्रार्थना।

अन्त में, शिविर में जो आनन्द की वर्षा हुई उसके लिये सर्वप्रथम गुरुदेव महाराज का धन्यवाद किया। उसके पश्चात् जिन साधकों ने, कर्मचारियों ने शिविर में किसी भी प्रकार का सहयोग दिया उन सबका नाम ले लेकर आभार व्यक्त किया।

भाई विष्णु कुमार जी गोयल (अध्यक्ष)

गीता के अध्याय 2 श्लोक 59 में भगवान् ने कहा है –

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।
रसवर्जं रसोप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते॥

इस श्लोक का अर्थ पूज्य गुरु महाराज ने गीता विमर्श में इस प्रकार समझाया है –

निराहार रहने से विषय तो नहीं पकड़ते परन्तु विषयों का रस नहीं जाता। जहाँ फिर विषय का संयोग हुआ व्यक्ति पकड़ा जाता है। जब तक भोग का संस्कार है तब तक खतरा है। भगवान् कहते हैं कि प्रभु के दर्शन हो जाने से विषयों का रस भी निवृत्त हो जाता है। प्रभु के दर्शन व्यक्ति को विषयों की पकड़ से ऊपर उठा देते हैं, दग्ध कर देते हैं निम्न कोटि के संस्कारों को।

दर्शन कैसे होते हैं? अनन्य भक्ति के द्वारा। अनन्य भक्ति कैसे मिलती है? प्रभु की कृपा से, सन्त की कृपा से और प्रभु के नाम के प्रताप से। भगवान् का नाम संयम का सुगम साधन है। सन्त की कृपा से नाम जागता है। प्रभु की कृपा से ही रास्ता चला जाता है और विषयों से नितान्त निवृत्ति हो ही जाती है।

अन्त में श्री विष्णु जी ने मथुरा भैय्या जी को याद किया जिन्होंने अनेक साधकों को गुरुदेव के मार्ग पर चलने के लिये प्रेरित किया। उसके बाद शिविर में भाग लेने वाले सभी साधकों का पुनः धन्यवाद किया।

❖ ❖ ❖

अमृत वचन

निःस्पृह जीवन जीना सीखना है। धीरे-धीरे उत्थान करें, एक दिन अध्यात्म के उच्च शिखर पर पहुँच जायेंगे। अपेक्षा भंग करें, दुर्गुणों की उपेक्षा करें, एक दिन अध्यात्म के उच्चतम शिखर पर पहुँच जायेंगे। प्रभु के प्रेम से लिपटा हुआ जीवन हो। जो स्वयं विधि-निषेध में बंधा है जैसे कर्म, वह जीव को कैसे मुक्त करेंगे। जब प्रभु की ओर जायेंगे तो संसार का आश्रय छोड़ना होगा। पराश्रय छूटे, तभी संसार की असारता का बोध होगा और वह बोध गुरु ही करवायेंगे।

वासनाओं का अभाव ही मोक्ष है, बाह्य विषयों का त्याग ही मोक्ष का रास्ता है। संसार में कर्तव्य करो पर फँसो नहीं। हमारा स्वरूप आनन्द ही है, अविद्या के कारण ही हमारा स्वरूप ढका है। दूसरे की हित-सिद्धि का नाम ही पुण्य है। स्वभाव में लौटना ही अध्यात्म है। प्रभु की भक्ति के सरोवर में डूबे रहो जैसे जल में मीन सुखी रहती है। शान्ति जहाँ है वहाँ हम जाते ही नहीं, अन्य वस्तुओं में हम शान्ति को ढूँढ़ते हैं। आनन्द है प्रभु में, हम ढूँढते हैं वस्तुओं में।

विश्वास रखें कि प्रभु मेरा रक्षक है। बुद्धि की उपेक्षा करके मन की इच्छायें पूरी करते हैं – यही हमारी आत्महत्या है। उपासना का परिणाम चित्त की शुद्धि है, चित्त-शुद्धि का परिणाम प्रभु प्राप्ति है। हमें सद्‌गुणों की सम्पत्ति इकट्‌ठी करनी है। हमें इसको अपने भीतर अर्जित, विकसित करना है। जब मन सरल होगा तब स्वतः ही शान्त हो जायेगा। आत्मीयता आने पर सरलता स्वतः ही आ जाती है।

अपने दीपक स्वयं बनो। विषाद सीमा तक पहुँचे तो मानव भक्ति में डूबता है। विषाद का क्षण संसार को भुला देता है। आहार शुद्धि से अन्तःकरण शुद्ध होता है, अन्तःकरण की शुद्धि से प्रभु की स्मृति बनी रहती है; अन्तःकरण की शुद्धि से मोक्ष मांगना नहीं पड़ता, स्वतः ही मिलता है। भक्ति हमारी दृष्टि बदलती है, दृश्य नहीं बदलती। अक्षर अर्थात जिसका क्षरण नहीं होता। जो प्रभु को जाने बिना संसार से चला जाता है वह बहुत कृपण होता है, जो जानकर जाता है वह किसी भी जाति में हो, ब्राह्मण हो जाता है।

विज्ञान से छिपा हुआ रहस्य प्रकट होता है। अध्यात्म के द्वारा अपने आप को जानते हैं, अपने आप को जानना अति श्रेष्ठ है। राम प्रभु हमारे ज्ञान चक्षु खोलना चाहते हैं। हम अपनी सोच से अधिक सोच ही नहीं सकते। रावण को विद्या ने अहंकार दिया। विद्या एक तलवार है। तलवार से या तो किसी की सहायता करोगे या किसी को मारोगे। दूसरों के गुणों को अवगुणों में बदल-बदल कर लोगों को दिखाता है। अहंकार (रावण) यदि सिर पर सवार हो तो कोई कितना भी समझाये, उसे समझ नहीं आयेगी। ज्ञान अन्दर से, अन्तर से प्रकट होता है, अध्यात्म ज्ञान के बिना जीवन अपूर्ण है।

उतावलापन, अधीरता से मानव स्वयं अपनी शान्ति को भंग करता है। सहनशीलता आनी चाहिए। हम अपनी मानसिक शान्ति के स्वयं ही दुश्मन हैं। मैं स्वयं ही अपना शत्रु हूँ। यदि अपना मनोबल गिरा दोगे तो भजन कैसे करोगे। जिस दिन प्रेम सेवा में बदल जायेगा, उसी दिन आप सच्चे भक्त बन जाओगे। सन्तोष आने पर

दु:ख हो ही नहीं सकता, यही सच्चा निर्वाण है। कर्तापन बहुत बड़ा बन्धन है। सच्चा सन्त संसार में रहते हुए भी मुक्ति का आनन्द ले सकता है। बाली ने मरने से पहले अहं छोड़ दिया था। भक्ति कृपा-साध्य है, कर्म साध्य नहीं। जब हम अपने को मालिक मानते हैं तो वास्तविक मालिक को भूल जाते हैं।

लोकहित की भावना से किया जाने वाला कर्म ही यज्ञ है। विनाश ही सृजन का कारण है। जीवन में जो कुछ भी मिले उसे ही आत्मसात करो। जो प्राप्त है वही पर्याप्त है। ज्ञानी अपेक्षारहित होता है, वह कुछ चाहता नहीं; उसका कर्म भगवदार्पण होता है। प्रभु तो हमें सर्वश्रेष्ठ ही देगा। प्रभु चरणों में श्रद्धा होगी तो सच्चा समर्पण होगा, कामना का विसर्जन होगा। भक्ति में कोई बन्धन नहीं। प्रभु के पास सुनने की क्षमता भी है, हल भी है। हमें सुख शाश्वत चाहिए या अशाश्वत चाहिये, यह हमें सोचना होगा। शाश्वत सुख ही स्थाई शान्ति दे सकता है। शान्ति शाश्वत हो। आने-जाने वाले में मन लगाओगे तो जन्म-मरण होगा ही। असंयमित जीवन अपने से ही शत्रुता होगी, इससे मन कमज़ोर होगा।

जीभ सज्जन पुरुष, दाँत दुष्ट लोग। जी की जलन ही अन्धकार है, अज्ञान ही अन्धकार है। अज्ञान की तलवार से युद्ध मत करो। शरीर के भीतर आत्मा ही प्रकाश है। मन को वश में कर लो, फिर इसी रथ से अनन्त को जा सकते हो। मोह ही अज्ञान है। अज्ञान से कर्तव्य-अकर्तव्य का पता नहीं चलता। असत्य का ज्ञान हो तो सत्य पर चल पड़ो। गीता ज्ञान का भण्डार है। कर्ता बनने पर भोक्ता बनना पड़ता है। कर्मयोगी की कोई भी क्रिया अपने लिये नहीं है। आसक्ति कर्म और कर्मफल में ही होती है।

साधु भिक्षा लेकर गृहस्थी को कृतार्थ करता है। हरि-चर्चा करते रहने से हमारी हृदय की भूमि अधिक उपजाऊ हो जायेगी। आचरण से गिरी औरत का विश्वामित्र उद्धार नहीं कर सकते। इसका उद्धार वही कर सकता है जिसका सपने में भी आचरण ख़राब न हो। भक्ति में स्नेह का तेल लगा लो, कर्म के चाकू से जगत का काम करो, फिर जगत तुम में व्याप्त नहीं होगा। जीवन की किसी भी परिस्थिति में बन्धन न लगे, जीते जी ही मुक्त हो जायेगे। निरासक्त होकर कर्म करने से हम लिप्त नहीं होते। प्रभु के आश्रय से कर्म करने का प्रयत्न करें, हम अपने कर्मों को प्रभु के चरणों में समर्पित करते रहें। गीता का कृष्ण अध्यात्म का परब्रह्म है। जब हम रिक्त होंगे तभी प्रभु के अनुग्रह की वर्षा होगी। अपने संकल्प शुद्ध रखने होंगे। 'मैं' व्यक्ति को इतना संकीर्ण बना देता है कि व्यक्ति दूसरे व्यक्तियों को तिरस्कार की दृष्टि से देखने लगता है। एक 'मैं' अहंकार है, एक 'मैं' स्वाभिमान है। स्वाभिमान जीवित रहना चाहिए।

जीवन के रथ के लिये पुरुषार्थ और भाग्य दोनों हों। साधक यह माने कि मैं अज्ञानी हूँ, बीमार हूँ, तभी गुरु रूपी डॉक्टर के पास जायेगा। जो प्रभु के लिये जिये वही पार्थ है। अध्यात्म व्यक्ति को मुक्ति की ओर ले जाता है। संसारी विद्या व्यक्ति को बन्धन में डालती है। स्कूल का बच्चा छुट्टी के समय प्रसन्न होता है और हम जीवन भर बन्धन में ही रहना चाहते हैं। अध्यात्म में निर्भयता होती है, संसार के सभी पदार्थों में भय रहता है।

– रमना सेखड़ी

विचारों का महत्व

(पुरानी पत्रिका से उद्धृत)

मानव-जीवन में विचारों का अत्यधिक महत्व है, विचार शक्ति मनुष्य के मस्तिष्क में विचार आन्दोलन की क्रिया करती रहती है। मनुष्य का वास्तविक स्वभाव विचारमय है। हमारा सुख-दु:ख हमारे विचारों का परिणाम है। हमारे भले विचार हमारे सुख तथा बुरे विचार दु:ख को बढ़ाते हैं। हमारी वर्तमान स्थिति हमारे पूर्व विचारों और योजनाओं का ही परिणाम है; और वर्तमान में जो हम विचार कर रहे हैं वही हमारे भावी जीवन की रूपरेखा है। प्रति क्षण जो हम विचारते हैं, उसकी छाप हमारे अन्तर्मन पर पड़ती है। वे संस्कार गुप्त रूप से दीर्घकाल तक अन्तर्मन में संचित रहते हैं और हमारे नित्य कामों पर अपना प्रभाव डालते रहते हैं।

कुछ लोगों को सदैव प्रत्येक कार्य में निराशा दिखाई दिया करती है। वे सुखद कार्यों में भी दु:ख की झलक देखा करते हैं। ऐसे मनुष्य समस्त सांसारिक सुख साधनों के होते हुए भी उनसे लाभ नहीं उठा सकते। बुरे विचार चित में विकलता उत्पन्न कर देते हैं, जिससे कि कोई भी वस्तु प्रिय नहीं लगती। किसी भी प्रकार के सुख का आस्वादन करने के लिये मानसिक शान्ति की आवश्यकता होती है, और वह शान्ति अच्छे विचारों से ही प्राप्त होती है। सुन्दर विचार समय-समय पर प्रत्येक व्यक्ति के मन में आते रहते हैं। पर यदि हम अपनी मूल्यवान वस्तु के समान उनकी रक्षा नहीं करते तो वे लोप हो जाते हैं। दु:ख की बात है कि हम अपनी छोटी से छोटी वस्तु को तो बहुत सँभाल कर रखते हैं, परन्तु मूल्यवान विचारों की परवाह नहीं करते।

विचारों में मानव जीवन को परिवर्तित करने की अनन्त शक्ति है। महात्मा बुद्ध, महर्षि दयानन्द तथा स्वामी श्रद्धानन्द आदि महापुरुषों का जीवन उनके मस्तिष्क में आने वाले विचारों से ही दूसरी ओर परिवर्तित हुआ था। आत्मवाद के महत्व को समझने वाले अमेरिका के उत्कृष्ट विद्वान मार्डन (Marden) ने एक स्थान पर लिखा है – "Man can change his character by changing his thoughts." अर्थात् मनुष्य विचार बदल लेने से अपने चरित्र को बदल सकता है। उन्होंने कहा है कि मनुष्य अपने विचारों के अनुरूप ही जीवन में सुखी अथवा दु:खी होता है। उनके कथनानुसार "Poverty itself is not so bad as the poverty of thought." अर्थात् अकिंचनत्व स्वयं इतना बुरा नहीं है जितना मानसिक अकिंचनत्व।

एक अन्य यूरोपियन विद्वान का कहना है कि 'हम अपना भविष्य अपने विचारों की श्रृंखला से बनाते हैं, इस बात को जाने बिना कि वह अच्छा बन रहा है या बुरा। समस्त ब्रह्माण्ड इसी प्रकार बना है।' भाग्य विचार का दूसरा नाम है, इसीलिये स्वामी रामतीर्थ महाराज ने कहा है –

यह भाग्य भाग्य जो कहते हैं,
यह है विचार का लोक नाम।
चुन लो खुद अपना भाग्य मार्ग,
धीरज से करते चलो काम॥

मनुष्य अन्यों की नाप-तोल अपने विचारों से ही किया करता है। यदि उसके विचार अच्छे होते हैं तो वह दूसरों को भी अच्छा समझा करता है, यदि बुरे होते हैं तो अन्यों को भी बुरा ही समझने लग जाता है। कहते हैं कि एक मनुष्य ने एकान्त सेवन के लिये जंगल में एक मकान बनवाया। कुछ समय तक रहने के बाद उसने उसे छोड़ दिया। मकान खाली पड़ा था, उधर से गुजरने वाले चोरों के एक जत्थे ने उस मकान को अपने लिये उपयोगी समझा। कुछ अनाचारियों ने अपनी अनाचार भावना की पूर्ति करने को उसे उपयुक्त स्थान समझा। एक ईश्वर भक्त ने ईश्वर चिन्तन के लिये उसे अच्छी जगह समझा।

प्रत्येक ने अपने-अपने विचारानुकूल उसे अपने लिये उपयुक्त समझा। इसी प्रकार जब मनुष्य अपने दूषित विचारों के कारण अन्यों को बुरी दृष्टि से देखता है तो दूसरे भी कार्य प्रतिकार्य के नियमानुसार उसे वैसी ही दृष्टि से देखने लगते हैं। उसका फल समाज में अशान्तिकारक होता है। इसी कारण बुरे संकल्प देश के लिये अहितकर होते हैं।

शारीरिक स्वास्थ्य पर भी विचारों का गहरा प्रभाव पड़ता है। यदि हम अपने को दुर्बल या शक्तिहीन विचारते हैं तो हम वैसे ही बन जाते हैं। मुझे स्मरण है कि मैं 1947 में मुम्बई में बीमार पड़ी थी। मेरी दशा अत्यधिक खराब होने पर डॉक्टर हर समय मेरी देखभाल करते। मुझे हिलने-डुलने को भी मना कर दिया गया, और कहा गया कि जीवन का खतरा है। मैं अपने को शक्तिहीन समझकर मरने की प्रतीक्षा करने लगी। तभी कुछ लोगों की सलाह से मुझे दूसरे अस्पताल ले जाया गया। वहाँ की डॉक्टर मिस खरे ने मेरा निरीक्षण किया, मैंने उनकी ओर दीनता से देखकर कहा, 'डॉक्टर! क्या मैं किसी प्रकार अच्छी हो सकती हूँ।' उन्होंने हँसती हुई मुद्रा में उत्तर दिया – 'वाह, क्यों नहीं, तुम तो बहुत जल्दी ठीक हो जाओगी, घबराने की कोई बात ही नहीं है।' मैंने कहा – 'डॉक्टर! मेरा Heart weak (दिल कमजोर) हो चुका है।' उन्होंने कहा – 'हमने अच्छी प्रकार देख लिया है, ऐसी कोई बात नहीं है।' आश्वासनमय शब्दों में क्या जादू था कि उसी समय से मैंने बड़ी शक्ति अनुभव की। मेरी दशा सुधरने लगी। शायद वे आशापूर्ण शब्द, वह प्रसन्न मुखमण्डल जिन्होंने मुझे जीवन प्रदान किया, मैं जीवन भर न भूल सकूँगी। अच्छे होने के पश्चात् मुझे मालूम हुआ कि वास्तव में उस समय मेरी दशा अत्यन्त चिन्ताजनक थी। डॉक्टर खरे ने मेरे घरवालों के सामने बड़ी चिन्ता व्यक्त की थी। नर्सों को मेरी दशा देखने के लिये विशेष रूप से सावधान किया था परन्तु उपचार के साथ-साथ मुझे उन्होंने जो आशावादी विचार दिये वे ही मेरे जीवनदाता बने। प्रसिद्ध विद्वान मर्डन का कथन कितना सत्य है – 'A man can renew his body by renewing his thoughts.' अर्थात् मनुष्य अपने विचारों को नया कर लेने पर अपने शरीर को भी नया कर सकता है। बहुत से रोग मन के बुरे भावों के कारण हो जाते हैं, कभी-कभी विपरीत ज्ञान आदि से मृत्यु भी हो जाती है।

चेतन मन के विचार ही कुछ काल के पश्चात् अचेतन मन में चले जाते हैं और उन्हीं से हमारा चरित्र-निर्माण होता है। प्रेममय पवित्र तथा परोपकारमय विचारों से सुन्दर व्यक्तित्व निर्मित होता है। क्रोध, ईर्ष्या, घृणा और अशुभ विचारों से अभद्र चरित्र बनता है। प्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान जेम्स एलेन ने कहा है – 'हमारा जीवन एक करघा है, जिस पर मन रूपी जुलाहा विचार रूपी सूत से भले बुरे कामों के ताने बाने करके चरित्र रूपी वस्त्र को बनाता है और उस वस्त्र में अपने को उसी प्रकार लपेट लेता है, जिस प्रकार रेशम का कीड़ा।' यदि हमारा मन क्रोध, द्वेष और घृणा के विचारों से रहित हो जाये तो संसार की कोई वस्तु हमें हानि नहीं पहुँचा सकती। ऋषि मुनियों के आश्रमों में उनके पास हिंसक पशुओं का रहना और किसी प्रकार की हानि न पहुँचाना इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। उनके विचार ही उस वातावरण के निर्माता होते थे।

जिस प्रकार प्रकाश की किरणें आस-पास के परमाणुओं को प्रकाशित करती हैं, उसी प्रकार विचारों में भी एक ही प्रकार के अपने जैसे विचारों को उत्पन्न करने की शक्ति होती है। विचारों की लहरें तोपों की आवाज़ से भी अधिक शक्तिशाली होती हैं; वे दूर तक फैलती हैं उनका अन्त नहीं। विचार सेनाओं से भी अधिक शक्तिशाली होते हैं। विचार ही सेनाओं का संचालन करते हैं और तोपों और बन्दूकों से जो विजय मिलती है वह सब विचारों के कारण। पक्के विचारों का सिद्धान्तवादी सदैव विजयी होता है।

इंग्लैण्ड के डॉक्टर स्टेनसन हूकर, जो विद्युत प्रकाश और रंग-चिकित्सा के विशेषज्ञ हैं, ने बताया है कि मनुष्य के मस्तिष्क से जो उसके भावों और विचारों का केन्द्र होता है, रंगीन किरणें निकला करती हैं; वे किरणें निम्न प्रकार की होती हैं –

1. जो मनुष्य अत्यन्त आवेशपूर्ण (Passionate) होते हैं, उनके मस्तिष्क से निकलने वाली किरणें गहरे लाल रंग की होती हैं।
2. परोपकारी पुरुषों की किरणें गुलाबी रंग की होती हैं।
3. यश की कामना वाले पुरुषों की किरणें नारंगी रंग की हुआ करती हैं।
4. गहरे विचारकों की किरणें गहरी नीली रंग वाली हुआ करती हैं।
5. कला प्रेमियों की किरणें पीली होती हैं।
6. उद्विग्न और उदास पुरुषों की किरणें धवल (Grey) होती हैं।
7. नीच प्रकृति वालों की किरणें मैली बादामी होती हैं।
8. भक्ति और सदुद्देश्य वालों की हलकी नीली होती हैं।
9. उन्नतिशील मनुष्यों की हलकी हरी होती हैं।
10. शारीरिक और मानसिक रोगियों की गहरी हरी होती हैं।

इन किरणों के देखने का अभ्यास करने पर कोई भी मनुष्य मानवी हृदयों का पाठ करने की योग्यता प्राप्त कर सकता है।

विचारों में अपने समान विचारों से मिलने की भी अद्भुत शक्ति होती है। देखा जाता है कि मनुष्य अपने समान विचार वाले व्यक्ति से बड़ी शीघ्रता से मिल जाता है। किसी कवि ने सत्य कहा है –

पानी में पानी मिले, मिले कीच में कीच।
उत्तम से उत्तम मिले, मिले नीच से नीच॥

प्रेममय विचारों से प्रेम तथा घृणायुक्त विचारों से घृणा उत्पन्न होती है। मन में जब कोई विचार उत्पन्न होता है तो वह नष्ट नहीं हो जाता, अपितु शरीर के बाहर आकर आसपास के वायुमण्डल पर छाप लगा देता है। इस संकल्प या विचार का यदि किसी मनुष्य या जीव-जन्तु से सम्बन्ध हो तो वह संकल्प तदाकार हो जाता है। पेरिस के डॉक्टर वेराडुक ने इनके फोटो लिये हैं। उनमें से कुछ नीचे दिये जा रहे हैं –

1. एक लड़की अपने मृत पक्षी का विचार कर रही थी। जब उसका फोटो लिया गया तो पिंजड़े में उस पक्षी का चित्र खिंच गया।
2. एक स्त्री अपने मरे बच्चे का चिन्तन कर रही थी, फोटो लेने पर प्लेट पर मरे बच्चे का चित्र आ गया।
3. एक सिपाही अपने गरुड़ पक्षी का विचार कर रहा था। फोटो लेने पर वैसा ही चित्र खिंच गया।

कुछ लोग फोटो लेने की इस क्रिया पर सन्देह करेंगे, परन्तु सन्देह की बात कुछ भी नहीं है। विचार शब्दमय होते हैं और शब्द प्राकृतिक होते हैं। पंच-तन्मात्राओं में जिनमें सूक्ष्म भूतों का विवरण दिया गया है, पहली तन्मात्रा शब्द ही है। इसलिये प्राकृतिक विचार के फोटो लिये जाने में न कोई आश्चर्य है, न अस्वाभाविक प्रक्रिया ही।

जीवन में सफलता प्राप्ति के लिये विचारों की दृढ़ता आवश्यक है। इसी से मनुष्य अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सफल हो सकता है। महात्मा गाँधी आदि महापुरुषों के जीवन पर यदि हम विचार करें तो हमें ज्ञात होगा कि सुन्दर विचारों की दृढ़ता से ही उनका जीवन सफल हुआ। प्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान जेम्स ऐलन ने कहा है – 'हमारी आत्मोन्नति के साधन हमारे विचार ही हैं।'

अब प्रश्न उठता है कि अच्छे विचारों को मन में किस प्रकार एकाग्र किया जाये। विचारों को एकाग्र करने के लिये मन की एकाग्रता आवश्यक है। एकाग्र विचार-शक्ति के समान संसार में दूसरी

शक्ति नहीं है। एकाग्रता करना उतना कठिन नहीं है जितना समझा जाता है। थोड़ा प्रयत्न करने पर ही यह सम्भव हो सकता है और तभी हमारे विचार स्थायी होकर हमारा चरित्र उज्ज्वल और जीवन सुख शान्तिमय बना सकते हैं। इस कारण हमें सदैव सुन्दर विचारों को मन में स्थान देना चाहिए और असुन्दर तथा अभद्र विचारों से शत्रु के समान सावधान रहना चाहिए। उत्तम विचारों का आह्वान किया जाये, मन को उस ओर लगाया जाये, तो दुष्ट विचार डेरा डण्डा उठाकर स्वत: ही चल देते हैं। किसी विद्वान ने सत्य कहा है –

'प्रत्येक शुभ विचार हमारे लिये अमृत का एक बिन्दु बन जाता है। एक विष का घूँट हमारी उतनी हानि नहीं कर सकता जितनी हानि एक अशुभ विचार कर सकता है।' शुभ विचारों से ही हृदय पवित्र होता है। संकल्प शक्ति के महत्व का वर्णन करते हुए हमारे संस्कृत साहित्य में एक स्थान पर कहा गया है –

'यन्मनसा ध्यायति तद्वाचा वदति। यद्वाचा वदति तत्कर्मणा करोति। यत्कर्मणा करोति तद्भिसंपद्येत।' अर्थात् मनुष्य जिस बात का पहले मन के द्वारा संकल्प करता है उसी को वाणी के द्वारा और उसके उपरान्त कार्यरूप में प्रगट करता है। इससे स्पष्ट है कि समस्त कर्मों का कारण मन का संकल्प ही हुआ करता है। और इसी कारण मनुष्य अपने विचारों के अनुकूल निम्न अथवा उच्च पटलों में निवास करता है। उसके इर्द–गिर्द के सभी पदार्थ उसके विचारों के रंग में रंगे होते हैं। इसीलिये महात्मा ईसा ने कहा है –

'धन्य हैं वे जिनका हृदय पवित्र है, क्योंकि ऐसों को ही परमात्मा के दर्शन होंगे।'

अच्छे विचार समाज में शान्ति और सद्‌भावना को जन्म देते हैं। समाज ही आध्यात्मिक विकास का क्षेत्र है। पूज्य स्वामी रामानन्द जी ने भी 'आध्यात्मिक साधन, खंड 2' में लिखा है –

'जो दूसरों से प्रेम करता है वह प्रेम की तरंग वातावरण में भी छोड़ता जाता है; और जो द्वेष करता है वह द्वेष की तरंगों से वातावरण को लाद देता है। यह सूक्ष्म वातावरण समाज के मन को प्रभावित करता है।'

अत: यह निर्विवाद सत्य है कि हमारी आध्यात्मिक, भौतिक एवं शारीरिक उन्नति के मूल हमारे विचार ही हैं। संसार के समस्त कार्यों को सम्पादित करने की सबसे प्रबल शक्ति विचारशक्ति ही है।

– श्रीमती चन्द्रावती शर्मा

❖ ❖ ❖

शुचिता : बाहरी और आन्तरिक

('राम सन्देश' पत्रिका से उद्धृत)

हम लोग जब भी घर से बाहर निकलते हैं तो सज–धज कर एक बार शीशे में आत्म–दर्शन जरूर करते हैं, ताकि कहीं कोई बाहरी कुरूपता या दाग धब्बा न दिखे। पुरुष और स्त्रियाँ दोनों ही इस मेकअप में तत्पर रहते हैं। यहाँ तक कि किसी मकान की लिफ्ट में घुसते ही पहले हम अपनी आकृति निहारते हैं, फिर और कहीं निहारते हैं। उद्देश्य यही रहता है कि कोई भी हमारी कुरूपता देख न पाये। 'लोग क्या कहेंगे', यह भय हमारे मन में सदैव छाया रहता है। अपने–अपने घरों में भी गृहिणियाँ अपने ड्राइंग रूम या बैठक के कमरे को खूब सजा कर रखती हैं, ताकि मेहमान लोग उनके जीवन स्तर को देखते ही रह जायें। लेकिन घर की असली सफाई और सजावट देखनी हो तो नौकरों के कमरों में देखें या

कोने में झाँकें, जहाँ वे सोते अथवा कपड़े इस्त्री करते हैं। वह आपकी सफाई और सजावट का स्तर है, न कि बैठक का कमरा। गन्दगी अनजानी जगहों में सिमटती है हमेशा।

हमारे धर्मशास्त्रों में शुचिता का अत्यधिक महत्व है। शुचि अर्थात् पवित्रता, साफ-सफाई। जिस तरह हम अपनी बाहरी वेशभूषा संवार कर रखते हैं, उसी तरह भीतर मन और बुद्धि का कोना भी साफ होना चाहिए। शुचि और पवित्र होना चाहिए। इसीलिये हिन्दू जीवन पद्धति में प्रातःकाल उठकर सबसे पहले स्नान-ध्यान करने का नियम बनाया गया है। स्नान यानि शरीर की सफाई और ध्यान यानि मन की सफाई। ईश्वर का यह सात्विक बैंक प्रातः 4-6 के बीच ही अपने दरवाज़े खोलता है, बाद में बन्द। 'जो सोवत है, सो खोवत है' वाली कहावत इसीलिये चरितार्थ होती है।

श्रीकृष्ण ने भी गीता में कहा है कि संयमी का दिन और भोगियों की रात होती है, अर्थात् दोनों के जीवन-मूल्य ठीक उल्टे होते हैं। अपनी वासनाओं या कामनाओं के मैल को देख पाना अत्यधिक कठिन है। हमें जब तक अपने बाहर की गन्दगी का अहसास नहीं होगा, तब तक अन्दर के सूक्ष्म मैल को कैसे पकड़ पायेंगे? इसीलिये अपने घर के कूड़े-करकट व मैले को पहले साफ करना होगा, बाद में मकान के दालान, मोहल्ले की नालियों, सड़कों इत्यादि को। हमारी प्रवृत्ति होती है कालीन के नीचे कचरा छिपाने की।

बड़े-बड़े करोड़पति और उनके बच्चे अपनी मर्सीडीज गाड़ियों में चलते हैं और उसकी खिड़की खोलकर पान की पीक इस तरह से बाहर फेंकते हैं अथवा आइस्क्रीम का डिब्बा ऐसे फेंकते हैं, जैसे उस गन्दगी से उनका कोई लेना-देना न हो। अपनी गाड़ी में कचरे की थैली या पीकदान तो वही रखेगा जिसको गन्दगी की अनुभूति होगी। सुबह बिस्तर छोड़ते ही प्रभु ने साफ-सफाई का विधान बनाया है। मुँह धोना, आँख साफ करना, दाँत माँजना, स्नान आदि सभी क्रियायें शुचिता अर्थात् शरीर के मैल को निकालने की होती हैं। वहाँ से हमें अपने सूक्ष्म मन की ओर बढ़ना होगा। वहाँ अपने-पराये की गन्दगी है, जिसे हटाना होगा। भले ही पुलिस या कोई भी हमें न देखे मन, वचन या कर्म से हम कुछ भी अनर्थ या पाप करेंगे तो सर्वशक्तिमान के कम्प्यूटर में वह हमारे खाते में दर्ज़ हो जाता है जिसका फल अवश्यमेव मिलेगा, चाहे यहाँ की अदालतों से हम बच निकलें।

अतः हम अपने कल्याण की सोचें तो इस शुचिता को अपनाना होगा। अन्दर की शुचिता तभी आयेगी जब हम बाहर की गन्दगी को देख कर हटा सकें। अपने देश में हम लोग तीर्थो में भी गन्दगी करने से बाज नहीं आते, सामान्य जगहों की तो बात ही क्या है। इस आदत से हमारा भला होने वाला नहीं। 'क्लीनलिनेस इज नेक्स्ट टु गॉडलिनेस' की उक्ति के अनुसार साफ-सफाई ईश्वर की पथगामिनी है।

कुम्भ में त्रिवेणी संगम (मन, बुद्धि और शरीर) पर स्नान और शुद्धि का यही माहात्म्य है। इसे कुम्भ में ही नहीं, प्रत्येक पल ध्यान में रखना होगा। लेकिन लाखों साधुओं को स्नान-तिलक के बाद चिलम फूँकते देखकर क्या असर पड़ता है, यह तो समाज विज्ञान के विशेषज्ञ ही बतायेंगे।

अमरता की तलाश है कुम्भ स्नान। कुम्भ प्रतीक है शुभता का। कहते हैं कि कुम्भ के मुख में विष्णु, कण्ठ में रुद्र और उसके मूल में ब्रह्मा का निवास है। कुम्भ का जल सप्त-सिन्धुओं का प्रतीक है। इसकी चारों दिशाओं में वेद मूर्तिमन्त होकर स्थापित हैं। कुम्भ स्नान का अर्थ है इन सबकी उपस्थिति का एहसास। तब जीवन अमृतमय बन जाता है।

– प्रज्ञा

❖ ❖ ❖

बोझ प्रभु के कंधे पर

('कल्याण' पत्रिका से उद्धृत)

प्रभु को चिन्ता सबकी रहती है, पर विशेष चिन्ता उसे दीनों की होती है। और लोग भी प्रभु के हैं, पर दीन तो प्रभु के ही हैं। औरों का आधार और भी होता है, पर दीनों का आधार तो दीनदयाल ही होता है। समुद्र के बीच जहाज के मस्तूल से उड़े हुए पंछी को मस्तूल के सिवा और ठिकाना कहाँ हो सकता है? उससे हटकर वह कहाँ रह सकता है? दीन का चित्त प्रभु से छूटे भी तो किससे लगे? इसीलिये दीन प्रभु के कहलाते हैं, प्रभु दीनों का कहलाता है। दीनता का यही वैशिष्ट्य देखकर कुन्ती ने उस समय, जब उसे प्रभु ने वर माँगने को कहा, दीनता माँगी। कोई कह सकता है कि प्रभु तो देता था कटोरी में, पर अभागिनी ने माँगा दोने में! फूटी कटोरी से साबित दोना सौ दर्जे अच्छा।

कदाचित् कोई तार्किक बीच में ही पूछ बैठे – 'तो फूटी कटोरी की बात ही क्यों?' मैं स्पष्ट कहूँगा – 'नहीं, पानी पीने की दृष्टि से तो साबित दोने और साबित कटोरी का मूल्य समान है; पर अन्दर पैठकर देखें तो वह धातु की कटोरी घात की वस्तु बन जाती है। कटोरी की छाती में एक बड़ी धुकधुकी लगी रहती है – 'मुझे कोई चुरा तो नहीं ले जायेगा?' दोने के लिये यह भय असम्भव है, अत: वह निर्भय है।'

फिर कटोरी और साबित का योग ही मुश्किल से मिलता है। रामदासके शब्दों में – **'जो बड़ा, सो चोर।'** ऐसे उदाहरण बहुत थोड़े हैं कि आदमी बड़ा हो और प्रभु उस पर न्योछावर हों। ऐसे उदाहरणों का प्राय: अभाव ही है; और जो कहीं और कभी दीख पड़ा, तो इस रूप में कि जन्म का बड़ा, किन्तु बड़प्पन खोकर – अत्यन्त दीन होकर भगवान् के शरण आया, उसी दिन प्रभु ने उसे अपने निकट खींच लिया।

राजा बलि ने जब राजत्व का साज हटाकर मस्तक झुकाया, तब प्रभु ने उसके आँगन में खड़े रहना अंगीकार किया।

गजेन्द्र को जब तक अपने बल का घमण्ड रहा, तब तक उसने सब कुछ करके देख लिया और जब गर्व गला, तब उसे दीनबन्धु की याद आयी। उसी दिन की घटना का नाम तो **'गजेन्द्रमोक्ष'** है।

और अर्जुन? जिस दिन वह अपनी जानकारी के ज्वर से जीवित छूटा, प्रभु ने उसे गीता सुनायी। पार्थ का प्रभु से ही मतभेद हो गया। बड़ा आदमी जो ठहरा! प्रभु के मत से उसके मत का सौतिया-डाह क्यों न हो? किन्तु बारह वर्ष के वनवास ने उसे 'महत्ता' से उतारकर 'सन्तता' की सेवा करने का अवसर दिया। जब जानकारी पर अधिष्ठित मत के पाँव डगमगाने लगे, तब उसने निकटस्थ प्रभु के पाँव पकड़े। 'मैं तो इन्द्रियों का गुलाम हूँ, और मेरा 'मत' क्या? मेरी तो इन्द्रियाँ चाहे जैसा निश्चय करती हैं और मनरूपी मल्ल उस पर अपनी सही कर देता है। वहाँ धर्म को देख सकने वाली दृष्टि का गुजर कहाँ! प्यारे, मैं तुम्हारे द्वार का सेवक हूँ। मुझे तुम्हीं बचाओ।'

तब भगवान् की वाणी प्रस्फुटित हुई। गीता कही जाने लगी। परन्तु गीता कहते-कहते भी श्रीकृष्ण ने एक बात तो कह ही डाली – 'बड़प्पन की बात तो खूब करते हो!' गर्ज यह कि बड़े लोगों में यदि किसी के प्रभु का प्यारा होने की बात सुनी जाती है तो वह उसी की, जो अपना बड़प्पन खोकर, अपनी महत्ता एक ओर रखकर छोटे-से-छोटा, दीन, निराधार बन गया। तब वह प्रभु का आत्मीय कहलाया।

जिसे जगत् का आधार है, उसकी जगदाधार से कैसी रिश्तेदारी? जिसके खाते में जगत् का आधार जमा नहीं रह गया, उसी का बोझ प्रभु अपने कन्धों पर ढोते हैं ।

– सन्त श्री विनोबा जी भावे

सरल जीवन ही सच्चा ज्ञान है

('कल्याण' पत्रिका से उद्धृत)

ऐसा लगता है कि बड़ी-बड़ी ज्ञान की बातों में उलझकर मनुष्य सहज और सरल जीवन को खो बैठता है। जैसे संसार की उलझन है, वैसे ही यह भी है। सरलता और सच्चाई से जीवन बिताना ही तो ज्ञान है। बहुत-से दृष्टान्त याद कर लेना, बहुत-से भजन याद कर लेना, यह तो दिमाग पर बहुत बड़ा वजन लादना हुआ। जिन्हें प्रवचन करना हो उनके लिये यह बात है। अपनी मुक्ति के लिये बहुत-से शास्त्र पढ़ने की जरूरत नहीं, गीता के किसी एक श्लोक को ही जीवन में उतार लेने से ही काम बन जाता है। स्वामी विवेकानन्द कहा करते थे कि जो पाँच परखे हुए विचारों को आत्मसात् करके अपना जीवन गठन करता है, वह उस व्यक्ति से श्रेष्ठ है, जिसने पूरा ग्रन्थालय कण्ठस्थ कर लिया है। मैं अपने गुरु से कहता था कि मुझे यह ग्रन्थ पढ़ना है, वह ग्रन्थ पढ़ना है, तब वे कहते थे कि 'बेटा! पूरा समुद्र तू थोड़े पी सकेगा। सच्चाई से जीवन बिता, भगवान् का नाम ले, सबके प्रति सद्भावना रख और अपने धर्म का पालन कर। बस, इतने से ही तू भवसागर पार हो जायगा।'

एक व्यक्ति स्वामी विलासानन्द जी के पास आया और बोला कि स्वामी जी! एक पुस्तक लिखना चाहता हूँ, तब स्वामी जी बोले पहले से क्या कम पुस्तकें हैं, जो तुम और बोझ बढ़ाना चाहते हो। गीता है, रामायण है, वेद हैं, पुराण हैं – इनमें से कोई एक ही पढ़ लो तो कल्याण हो जाये।

शास्त्र पढ़ने से हमारा कोई विरोध नहीं, परन्तु इसकी अत्यधिक वासना थका देती है। श्रीउड़िया बाबाजी महाराज कहते थे कि 'शास्त्रों के जंगल में मत भटको।' कभी-कभी बहुत बड़ी-बड़ी ज्ञान की बातों में उलझ जाने के कारण हम यह भूल जाते हैं कि हमारे लिये कौन-सी एक-दो बातें हैं, जो हम जीवन में उतारकर अपना कल्याण कर सकें।

कठोपनिषद् में यह आया है कि –

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो
न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्य-
स्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनुःस्वाम्॥

यह आत्मा केवल प्रवचन से नहीं मिलता, न मेधा से और न बहुत सुनने से, बल्कि यह जिसका वरण करता है, उसके आगे अपना रहस्य प्रकट कर देता है।

शंकराचार्य भगवान् ने इसका भाष्य लिखते हुए यह कहा है कि केवल आत्मलाभ के लिये प्रार्थना करने वाले का ही यह आत्मा वरण करता है।

कबीर, सूर, नानक, मीरा, रैदास आदि सन्त ज्यादा पढ़े-लिखे न थे, परन्तु ये सब भगवत् प्राप्त व्यक्ति थे। आज सारा संसार इनको श्रद्धा से सर झुकाता है।

भगवान् शंकराचार्य **विवेकचूड़ामणि** नामक ग्रन्थ में लिखते हैं –

वाग्वैखरी शब्दझरी शास्त्रव्याख्यानकौशलम्।
वैदुष्यं विदुषां तद्वद् भुक्तये न तु मुक्तये॥

वाणी का कौशल, शब्दों का चमत्कार, शास्त्र की व्याख्या करने का कौशल – यह सब विद्वानों का मनोरंजन है, इसका मोक्ष से सम्बन्ध नहीं है।

वाचिक ज्ञानी मत बनो, बात को सही समझो एवं अपने जीवन को श्रेष्ठ बनाओ। एक साधु की डायरी देखी तो उसमें सिर्फ **'राम'** नाम लिखा था, बाकी कुछ भी नहीं। राजा पृथु ने अन्त में प्रजाजनों को उपदेश देते हुए कहा कि अपने धर्म का पालन करो एवं भगवान् को याद करो। बस, इतने से ही कल्याण हो जायेगा।

गीता में भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं, अपने स्वाभाविक कर्मों द्वारा भगवान् की पूजा करके मनुष्य परम सिद्धि को प्राप्त करता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि ईश्वर प्राप्ति का मार्ग बहुत ही सहज और सरल है, वह तो ज्ञान का अभिमान करने वाले लोग बात को उलझा देते हैं और बड़े-बड़े व्याख्यानों में असल बात छोड़ बैठते हैं। गिद्ध उड़ता आकाश में है, परन्तु नज़र मांस के टुकड़े पर होती है, उसी प्रकार बात तो **'अहं ब्रह्मास्मि'** की करते हैं, परन्तु नज़र कामिनी-कांचन पर रहती है। जीवन में त्याग आना चाहिए, सच्चाई आनी चाहिए, सरलता आनी चाहिए।

– श्रीदिलीपजी देवनानी

19.05.25 से 10.08.25 तक के 2100/- से ऊपर दानदाताओं की सूची

साधकगण अपने दान की राशि चैक द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में जमा करवा सकते हैं। भुगतान को और सुविधाजनक बनाने हेतु बैंक ऑफ़ इंडिया का QR Code भी दिया जा रहा है।

Swami Ramanand Sadhna Pariwar
BANK OF INDIA,
Haridwar
A/c No.: 721010110003147
I.F.S. Code: BKID0007210

Swami Ramanand Sadhna Pariwar
HDFC BANK,
Bhoopatwala, Saptrishi Chungi, Haridwar
A/c No.: 50100537193693
I.F.S. Code: HDFC0005481

साधना धाम का PAN नम्बर AAKAS8917M है।

जो दानदाता उपरोक्त बैंक खातों में से किसी में भी सीधे जमा करते हैं वे कृपया अपना नाम, पता, आधार कार्ड व PAN CARD का PDF निम्नलिखित नम्बरों में से किसी एक पर अवश्य प्रेषित करें –

1. श्री अनिरुद्ध अग्निहोत्री - 9690187900

2. श्री रवि कान्त भण्डारी - 9872574514

– **रवि कान्त भण्डारी,** प्रबन्धक, साधना धाम, मोबाइल: 09872574514, 08273494285

1.	सुशीला जयसवाल, मुम्बई	1,00,000
2.	सतीश खोसला, नई दिल्ली	1,00,000
3.	हरपाल सिंह राजपूत, हरिद्वार	1,00,000
4.	अविष्कार मेहरोत्रा, गुरुग्राम	1,00,000
5.	अनिल चन्द्र मित्तल, बीसलपुर	1,00,000
6.	कृष्ण अवतार अग्रवाल, बीसलपुर	1,00,000
7.	एसएम इण्डस्ट्रीज, कानपुर	51,000
8.	अनिल कुमार गुप्ता, हरदोई	51,000
9.	लक्ष्मी वर्मा, कानपुर	50,000
10.	अनिल चन्द्र मित्तल, बीसलपुर	26,500
11.	रुचि सिंह, शाहजहाँपुर	25,000
12.	स्वतन्त्र भण्डारी, अमृतसर	22,000
13.	मीरा, नोएडा	21,000
14.	इज्जत राय उप्पल, लुधियाना	21,000
15.	रीवा भाम्बरी, नोएडा	15,000
16.	विजय कुमार कंसल, बरेली	11,000
17.	अशोक कुमार शर्मा, लखनऊ	11,000
18.	प्रभात शुक्ला, उन्नाव	11,000
19.	रमेश-देवांश जयसवाल, कानपुर	11,000
20.	कमलेश गौड़, कानपुर	11,000
21.	सतीश कुमार दोहरे, राजपुरा	11,000
22.	रविकान्त भण्डारी, लुधियाना	11,000
23.	युद्धवीर सिंह चौहान	11,000
24.	चन्द्रभान गुप्ता, दिल्ली	11,000
25.	हर्ष कपूर, नई दिल्ली	11,000
26.	संजीव शुक्ला, जबलपुर	11,000
27.	प्रतीक मित्तल, बीसलपुर	11,000
28.	रीवा भाम्बरी, नोएडा	11,000
29.	दीपक शर्मा, प्रयागपुर (कांगड़ा)	10,000
30.	दया राम यादव, हरिद्वार	6,400
31.	प्रगति	6,000
32.	सावित्री देवी, गाजियाबाद	5,850
33.	हर्ष वर्धन जयसवाल, बीसलपुर	5,100
34.	रुचि सिंह, शाहजहाँपुर	5,100
35.	सुभाष चन्द्र अग्रवाल, बरेली	5,100
36.	राम कृपाल कटियार, तिलहर	5,100
37.	प्रीति अग्रवाल, पीलीभीत	5,100
38.	अंकित सुपुत्र अनिल मित्तल, बीसलपुर	5,100
39.	कल्पना राज गैस एजेंसी, बीसलपुर	5,100

(शेष अगले पृष्ठ पर...)

(19.05.2025 से 10.08.2025 तक के दानदाताओं की सूची पिछले पृष्ठ से ...)

40. आशा चोपड़ा, होशियारपुर	5,100	73. हेमन्त-रमेश जयसवाल, कानपुर	2,100
41. उषा अग्रवाल, पीलीभीत	5,100	74. अंकुर मित्तल, बीसलपुर	2100
42. विकास मिश्र, बरेली	5,100	75. गीता रानी वर्मा, कानपुर	2,100
43. सुधीर कान्त अग्रवाल, मेरठ	5,100	76. सुरेन्द्र अग्रवाल, बीसलपुर	2100
44. रीवा भाम्बरी, नोएडा	5,100	77. द्वारिका सेवा संघ, अहमदाबाद	2,100
45. अजय कुमार तिवारी, कानपुर	5,100	78. सतीश पाठक, तिलहर	2100
46. उषा गुप्ता, गाजियाबाद	5,100	79. नीरजा मोहन, हरिद्वार	2,100
47. सन्दीप किशोर अग्रवाल, बरेली	5,100	80. डॉ. चैतन्य एवं दिव्या अग्रवाल, आगरा	2,100
48. कमल कपूर, बरेली	5,100	81. शिखा अग्रवाल, बरेली	2,100
49. प्रभात शुक्ल, उन्नाव	5000	82. डॉ. मनमोहन मिश्र, कानपुर	2,100
50. हरपाल सिंह राजपूत, हरिद्वार	5,000	83. सोहन लाल गुप्ता, कानपुर	2,100
51. शशिकान्त कुलश्रेष्ठ, गाजियाबाद	5,000	84. सत्य नारायण गुप्ता, बेंगलुरु	2,100
52. योगेश कुमार चण्डोक, फरीदाबाद	5,000	85. सुशीला जयसवाल, मुम्बई	2,100
53. ओम प्रकाश तिवारी, अहमदाबाद	5,000	86. योगेश कुमार अग्रवाल, बीसलपुर	2100
54. हरपाल सिंह राजपूत, हरिद्वार	5,000	87. अविनाश मेहता, करनाल	2,100
55. विजय रतन तुली, गुरुग्राम	5,000	88. मंजू लता जयसवाल, कानपुर	2,100
56. नन्द कुमार गुप्ता, गाजियाबाद	4,100	89. आशा कटियार, कानपुर	2,100
57. मिथलेश पोरवाल, कानपुर	4,000	90. सोमवती मिश्रा, कानपुर	2,100
58. विष्णु कुमार अग्रवाल, बरेली	3,101	91. महेश चन्द्र गुप्ता, जयपुर	2,100
59. आम्रपाली द्विवेदी, प्रयागराज	3,100	92. अनिल कुमार गुप्ता, हरदोई	2,100
60. राम शंकर गुप्ता, हरदोई	3100	93. सुधीर कान्त अग्रवाल, मेरठ	2,100
61. डॉ. आकांक्षा अग्रवाल, मेरठ	3,100	94. आलोक मित्तल, बीसलपुर	2100
62. सुधीर कक्कड़, गुरुग्राम	3,100	95. आंचल शुक्ला, प्रयागराज	2,100
63. सुभाष चन्द्र ग्रोवर, दिल्ली	3,100	96. नीलम खुल्लर, गाजियाबाद	2,100
64. विष्णु कुमार अग्रवाल, बरेली	3001	97. भारती गुप्ता, बीसलपुर	2100
65. पूजा जयसवाल, कानपुर	3,000	98. सन्दीप अग्रवाल, बरेली	2,100
66. सुधीर कान्त अग्रवाल, मेरठ	3,000	99. दीप्ति चुग, दिल्ली	2,100
67. अरविन्द गुप्ता, फरीदाबाद	2,500	100. डॉ. आकांक्षा अग्रवाल, मेरठ	2,100
68. मनोज कुमार-साधना गुप्ता, बीसलपुर	2,500	101. क्रान्ति	2,100
69. भारती गुप्ता, बीसलपुर	2,500	102. नीता सहगल, नई दिल्ली	2,100
70. पल्लवति द्विवेदी, कन्नौज	2,500	103. खुशबू	2,100
71. सावित्री देवी, गाजियाबाद	2,200	104. पुष्कर	2,100
72. शिखा मिश्रा, कानपुर	2,101		

(शेष अगले पृष्ठ पर...)

(19.05.2025 से 10.08.2025 तक के दानदाताओं की सूची पिछले पृष्ठ से ...)

105. चन्द्र मोहन शर्मा	2,100	110. अनिल जयसवाल, कानपुर	2,100
106. सूरजभान सक्सैना, कानपुर	2,100	111. रविकान्त शुक्ला, देहरादून	2,100
107. प्रतीक दीक्षित, नोएडा	2,100	112. सूरजभान सक्सैना, कानपुर	2,100
108. सूरजभान सक्सैना, कानपुर	2,100	113. गुप्तदान	1,66,482
109. चन्द्र प्रकाश गुप्ता, बरेली	2,100		

नोट: खेद है कि रु. 2,100/- या अधिक राशि के कुछ दान ऐसे प्राप्त हुए हैं जिनके नाम की जानकारी न होने के कारण इस सूची में शामिल नहीं किये गये हैं।

गुरु की छाया में ही सफल हो सकती है शिष्य की यात्रा

जैसे मछली जल के बिना नहीं रह सकती, वैसे ही शिष्य गुरु के बिना आगे नहीं बढ़ सकता। जल केवल मछली के जीवन का आधार नहीं, उसकी चेतना का विस्तार है। जैसे माता के बगैर बालक रह नहीं सकता, ऐसे ही शिष्य का गुरु के बगैर चलना मुश्किल ही नहीं, बल्कि असम्भव है। गुरु, केवल एक व्यक्ति नहीं, बल्कि चेतना के स्तर पर वह ऊर्जा है, जो शिष्य को जन्म-जन्मान्तर की अज्ञानता से बाहर निकालती है।

जीवन में हमें धन, वस्तुयें, सुख-साधन मिलते हैं। ये सभी शरीर को सुख देते हैं, परन्तु शरीर के साथ ही इनका अन्त भी हो जाता है। जो चीज मृत्यु के पार साथ जाती है, वह है मन। इसलिये मन का शुद्ध और सच्चा विकास ही जीवन का वास्तविक प्रयोजन है। अगर मन विषयों, वासनाओं, लालच, मोह और संसार के आकर्षणों में उलझा है, तो यह तृष्णा मृत्यु के बाद भी हमारा पीछा नहीं छोड़ती। यही अंधकार जन्म-जन्मान्तर की यात्रा में हमारे साथ चलता है।

इस अज्ञान, इस मोह, इस गहरे अन्धकार से केवल वही निकल सकता है, जिसके जीवन में श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ गुरु का आगमन हो। गुरु का मिलना केवल उनका दर्शन कर लेना या कभी-कभार उनकी सेवा कर देना नहीं है। गुरु का मिलना तब होता है, जब उनका ज्ञान शिष्य के अन्तःकरण में उतर जाये, जब उनका वैराग्य शिष्य की वृत्ति बन जाये।

गुरु-शिष्य का सम्बन्ध सामाजिक या आर्थिक नहीं होता, वह नाद का सम्बन्ध होता है। नाद यानी वह ध्वनि, वह दिव्य वाणी, जो गुरु मुख से निकलती है और शिष्य के हृदय को भीतर से रूपान्तरित करती है। यह शब्द केवल ध्वनि नहीं, चेतना का स्रोत होते हैं।

शिष्य वही है, जिसके जीवन में गुरु की अनुपस्थिति की कल्पना भी असह्य हो। जैसे मछली के लिये जल आवश्यक है, वैसे ही शिष्य के लिये गुरु की कृपा। समय, परिस्थिति, ऋतु, सुख-दुख, मान-अपमान, हानि-लाभ – कोई भी बाहरी स्थिति उसके गुरु-भाव को डिगा नहीं सकती। वह जानता है कि उसकी साधना, उसकी मुक्ति, उसके आत्म-ज्ञान की सारी सम्भावनायें गुरु कृपा की छाया में ही खिलती हैं।

गुरु पूर्णिमा का यह पावन दिन, उसी चिरन्तन सत्य का स्मरण है कि जीवन में जो कुछ भी शाश्वत, शुद्ध और परम है, उसकी ओर यात्रा केवल गुरु की छाया में ही सम्भव है। गुरु से प्राप्त नाद वही दिव्य कम्पन है, जो अज्ञान को छिन्न-भिन्न कर आत्मा के सूर्य को प्रकट करता है। गुरु पूर्णिमा पर हम सभी में यही भाव जागे कि केवल गुरु के दर्शन तक सीमित न रहें, बल्कि उनके वचनों को अपने जीवन में उतारें और आत्मज्ञान की यात्रा में अपने भीतर से नया आलोक प्रकट करें।

संकलन – **पी.बी. श्रीवास्तव**

– आनन्दमूर्ति गुरुमा

श्री पुरन्दर तिवारी जी के प्रति श्रद्धांजलियाँ

श्रीमती कमला वर्मा जी

श्री पुरन्दर तिवारी जी गुरुदेव महाराज पर पूर्ण रूप से समर्पित थे, कर्मठ व सेवाभाव से परिपूर्ण थे। पूरे साधना परिवार को इन्होंने वाट्सएप के माध्यम से जोड़ा हुआ था।

उनका दाह संस्कार उनके परिवार जनों की इच्छा के अनुसार दिगोली में ही किया गया। निश्चित रूप से इस दिवंगत आत्मा को पूज्य स्वामी जी ने अपने श्रीचरणों में स्थान दिया होगा।

विशेष बात यह है कि एक पूर्णतः निष्ठावान और समर्पित साधक ने अन्तिम श्वास पूज्य गुरुदेव की तपस्थली में ली और अन्तिम संस्कार के लिये भी वहीं स्थान प्राप्त हुआ। यह बहुत ही दुर्लभ संयोग है। इस घटना से भैय्या पुरन्दर जी के समर्पण का स्तर सिद्ध होता है। यह घटना श्री गीता जी के अध्याय 8 के श्लोक 5 के अनुरूप है –

अंतकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्। य प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र सशंयम्॥

श्री हरि प्रकाश सिंह चौहान

मर्माहत करने वाले समाचार से मेरा हृदय अत्यन्त पीड़ित है। विधाता का विधान कुछ ऐसा विचित्र है कि उसके समक्ष नतमस्तक होने के सिवाय कोई चारा नहीं है। सद्गुरु की तपस्थली पर शरीर का छूटना उनकी दिव्य यात्रा का शुभ संकेत है। परमपिता परमात्मा से मेरी यही याचना है कि दिवंगत आत्मा को उनके चरणों में विश्राम मिले और प्रिय परिवार-जनों को इस असामयिक निधन के वज्राघात को सहने की शक्ति प्रदान करे।

मृत्यु से पूर्व श्री पुरन्दर तिवारी जी ने गुरु महाराज का यह विचार सम्प्रेषित किया था – 'हम देह नहीं आत्मा हैं, कहना आसान है पर बिना अनुभूति के ऐसा कहना आत्मवंचना और आत्मप्रलाप है।' श्री गीता जी के 2/28 श्लोक को यदि साधक समझ ले तो न जन्म का दुःख रहे और न मृत्यु का शोक। साधक यदि इस तथ्य को अनुभूत कर ले तो वह जान सकता है कि भूतों का आदि अव्यक्त है, मध्य व्यक्त है, अन्त भी अव्यक्त है। इसलिये इस विषय में शोक कैसा? मनुष्य जन्म से पहले अव्यक्त है और मृत्यु के बाद भी वह अव्यक्त हो जाता है तो यह कहना कि बीच में वह व्यक्त है, मात्र छलावा है। इसलिये स्वर्गस्थ तिवारी जी के सम्बन्ध में शोक नहीं करना चाहिए अपितु स्वामी रामानन्द विचार मंच का प्रणेता मानना चाहिए। कोरोना काल में शुरु किया गया मिशन सचमुच हम जैसों के लिये प्रेरणास्रोत रहा है। सद्गुरु के चुनिंदा विचारों की श्रृंखला ने उनके व्यक्तित्व को बहु आयामी बना दिया था। उनमें दिव्य दृष्टि का संचार होने लगा था। जो भी साधक सद्गुरु के विचारों से होकर गुजरेगा उसका जीवन कृत-कृत्य हो जायेगा। सद्गुरु की तपस्थली में देह का छूटना उनके पुण्यों का ही फल है। इससे उपयुक्त स्थान देहावसान के लिये मेरी समझ से अन्य कोई हो ही नहीं सकता।

सूक्ष्म में अव्यक्त रूप से रहकर पुरन्दर जी सचमुच नाम के अनुकूल विष्णु पद के अधिकारी हैं। पुनः मैं और मेरे जैसे अन्य साधक कृतज्ञता स्वरूप उन्हें श्रद्धांजलि देकर धन्यता अनुभव करते हैं।

साधना परिवार के आगामी कार्यक्रम

1. कानपुर साधना शिविर

दिनांक 11 अक्तूबर 2025 से 14 अक्तूबर 2025 तक

शिविर की पूर्ति: 14 अक्तूबर 2025 को प्रात:

पूज्य गुरुदेव का भण्डारा: दोपहर 11:00 बजे से

कार्यक्रम स्थल: जे.के. मन्दिर के पीछे, सोसाइटी धर्मशाला, पाण्डु नगर, कानपुर, उत्तर प्रदेश

सम्पर्क सूत्र: श्रीमती सुशीला जायसवाल, मोबाइल: 9322185891

2. श्रीमद्भगवद्गीता ज्ञान-यज्ञ

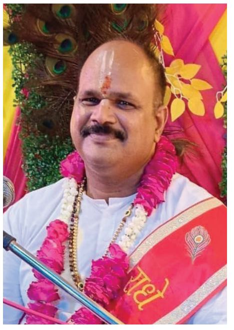

दिनांक 04 नवम्बर 2025 से 10 नवम्बर 2025 तक

समय: प्रात: 10:00 बजे से 12:00 बजे तक

सायं 3:00 बजे से 5:00 बजे तक

पूर्ति एवं भण्डारा: 11 नवम्बर 2025 प्रात: 10:00 बजे से

कथा व्यास: आचार्य सुशील जी मिश्र (हल्द्वानी वाले)

कार्यक्रम स्थल: स्वामी रामानन्द तपस्थली, ग्राम दिगोली, पोस्ट बाड़ाछीना, जिला अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड

सम्पर्क सूत्र: **श्री** सुभाष ग्रोवर, मोबाइल: 9152227718

3. बीसलपुर साधना शिविर

दिनांक 13 नवम्बर 2025 से 16 नवम्बर 2025 तक

पूज्य गुरुदेव का भण्डारा: 16 नवम्बर 2025 को प्रात: 8:00 बजे से

कार्यक्रम स्थल: श्री अग्रवाल सभा भवन, स्टेशन रोड, बीसलपुर, जिला पीलीभीत, उत्तर प्रदेश

सम्पर्क सूत्र: 9410818880, 9456083610

श्री विष्णु कुमार गोयल, मोबाइल: 9412482706

श्री स्वामी रामानन्द जी साधना साहित्य

1.	अध्यात्म विकास	इन पुस्तकों में श्री स्वामी जी ने अपनी विकासवादी नवीनतम साधना पद्धति का विस्तार से वर्णन किया है।
2.	आध्यात्मिक साधना (प्रथम खण्ड)	
3.	आध्यात्मिक साधना (द्वितीय खण्ड)	
4.	Evolutionary Outlook on Life	
5.	Evolutionary Spiritualism	
6.	जीवन-रहस्य तथा उत्पादिनी शक्ति	काम शक्ति तथा अध्यात्म विषय पर स्वामी जी द्वारा विशद् व्याख्या
7.	गीता विमर्श	श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय 1-7 की स्वामी जी द्वारा विशद् व्याख्या
8.	व्यावहारिक साधना	पूज्य स्वामी जी द्वारा लिखित तीन लेखों – (1) साधकों के लिये, (2) दम्पत्ति के लिये, (3) माता-पिता के प्रति का संकलन
9.	कैलाश-दर्शन	पूज्य स्वामी जी ने कुछ साधकों के साथ कैलाश-पर्वत की यात्रा व परिक्रमा की थी। उस यात्रा एवं उनकी आत्मानुभूति का विशद् वर्णन
10.	गीतोपनिषद	श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय 8-18 की स्वर्गीय श्री के.सी. नैयर जी द्वारा व्याख्या
11.	हमारी साधना	श्री पुरुषोत्तम भटनागर द्वारा सम्पादित
12.	हमारी उपासना	
13.	साधना और व्यवहार	
14.	अशान्ति में	
15.	मेरे विचार	
16.	As I Understand	
17.	My Pilgrimage to Kailash	
18.	Sex and Spirituality	जीवन-रहस्य
19.	Our Worship	हमारी साधना
		(प्रो. डा. लक्ष्मी सक्सेना द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित पुस्तकें)
20.	Our Spiritual Sadhana Part-I	आध्यात्मिक साधना (प्रथम खण्ड)
21.	Our Spiritual Sadhana Part-II	आध्यात्मिक साधना (द्वितीय खण्ड)
22.	स्वामी रामानन्द - एक आध्यात्मिक यात्रा	स्वस्पष्ट प्रो. डा. लक्ष्मी सक्सेना
23.	पत्र-पीयूष	कु. शीला गौहरी द्वारा साधकों के नाम स्वामी जी के पत्रों का संकलन
24.	स्वामी रामानन्द-चरित सुधा	स्व. डा. कविराज नरेन्द्र कुमार एवं वैद्य श्री सत्यदेव
25.	स्वामी रामानन्द-वचनामृत	श्री जगदीश प्रसाद द्विवेदी द्वारा गुरुदेव की पुस्तकों से संकलन
26.	मेरी दक्षिण भारत-यात्रा	पूज्य सुमित्रा माँ जी द्वारा दक्षिण भारत यात्रा का रोचक वर्णन
27.	पत्तियाँ और फूल	भजन, पद, कीर्तन, आरती आदि का संकलन
28.	दैनिक आवाहन विधि	स्वामी जी की साधना प्रणाली पर आधारित – श्रीमती महेश प्रकाश
29.	Letters to Seekers	कु. शीला गौहरी एवं श्री विजय भण्डारी द्वारा साधकों के नाम स्वामी जी के अंग्रेजी पत्रों का संकलन
30.	आत्मा की ओर	
31.	जीवन विकास – एक दृष्टि	Evolutionary Outlook on Life का हिन्दी अनुवाद
32.	विकासात्मक अध्यात्म	Evolutionary Spiritualism का हिन्दी अनुवाद
33.	गुरु के प्रति निष्ठा	तेजेन्द्र प्रताप सिंह
34.	माँ की विभूति – भक्ति रस (भाग 1 से 5)	अनाम साधिका
35.	श्रीराम भजन माला	श्री सूर्यप्रसाद शुक्ल 'राम सरन'
36.	माँ का भाव भरा प्रसाद गुरु का दिव्य प्रसाद	मीरा गुप्ता
37.	पत्र-पीयूष सार	पत्र-पीयूष का संग्रहीत संस्करण
38.	गीता पाठ	
39.	गृहस्थ और साधना	
40.	प्रभु दर्शन	
41.	प्रभु प्रसाद मिले तो	
42.	गीता प्रवेशिका - हिन्दी, संस्कृत व अंग्रेजी में गीता का संग्रहीत संस्करण	रमेश चन्द्र गुप्त 'विनीत'
43.	अध्यात्म विषयक लेख	
44.	वन्दना, स्तुति, प्रार्थना तथा वैदिक सामान्य ज्ञान	
45.	Gita Vimarsh	श्री कृष्ण गोयल द्वारा गीता विमर्श का English Translation

गुरु पूर्णिमा शिविर में गुरु दरबार की एक झलक

गुरु पूर्णिमा शिविर में साधना मन्दिर में चल रहे सामूहिक जाप के कुछ दृश्य